ऐसे घोर विकराल उस प्रेतको देख, बभ्रुवाहन आश्चर्यको प्राप्त होता भया. प्रेतभी घोर वनमें आये हुए राजाको देख ॥ २९ ॥ प्रसन्नचित्त होके, राजाके नजीक आके, हे गरुड! वह प्रेतराज राजाको ये वचन कहता भया ॥ ३० ॥ हे राजन्! तुम्हारे संयोगसे प्रेतभाव त्यागकर, परमगतिको प्राप्त होकर मैं बड़ा धन्य हूं ॥ ३१ ॥ राजा कहता है—हे कृष्णवर्ण विकराल मुखके प्रेत! तुमको कौनसे कर्मके फलसे बहुत अमांगलिक घोर जिसका दर्शन ऐसा प्रेतपना प्राप्त हुवा? ॥३२॥ हे तात! प्रेतभावका

तंदृष्ट्वाविकृतंघोरंविस्मितोबभ्रुवाहनः ॥ प्रेतोऽपिदृष्ट्वातंघोरामटवीमागतंनृपम् ॥ २९ ॥ समुत्सुकमनाभूत्वातस्यांतिकमुपागतः ॥ अब्रवीत्सतदाताक्ष्र्यप्रेतराजोनृपंवचः ॥ ३० ॥ प्रेतभावोमयात्यक्तःप्राप्तोऽस्मिपरमांगतिम् ॥ त्वत्संयोगान्महाबाहोजातोधन्यतरोऽस्म्यहम् ॥ ३१ ॥ राजोवाच ॥ कृष्णवर्णकरालास्यप्रेतत्वंघोरदर्शनम् ॥ केनकर्मविपाकेनप्राप्तंतेबह्वमंगलम् ॥३२॥ प्रेतत्वकारणंतातब्रूहिसर्वमशेषतः ॥ कोऽसित्वंकेनदानेनप्रेतत्वंतेविनश्यति ॥ ३३ ॥ प्रेतउवाच ॥ कथयामिनृपश्रेष्ठसर्वमेवादितस्तव ॥ प्रेतत्वकारणंश्रुत्वादयांकर्तुंत्वमर्हसि ॥ ३४ ॥ वैदिशंनामनगरंसर्वसंपत्समन्वितम् ॥ नानाजनपदाकीर्णंनानारत्नसमाकुलम् ॥ ३५ ॥ हर्म्यप्रासादशोभाढ्यंनानाधर्मसमन्वितम् ॥ तत्राहंन्यवसंतातदेवार्चनरतःसदा ॥ ३६ ॥

संपूर्ण कारण समग्रतासे कहो. तुम कौन हो? कौनसे दानसे तुम्हारा प्रेतपना नाश होवे? ॥ ३३ ॥ अब प्रेत कहता है—हे नृपश्रेष्ठ! संपूर्ण बात आदिसे तुमसे कहता हूं प्रेतत्वका कारण सुनकर तुम दया करने योग्य हो ॥ ३४ ॥ एक वैदिश नाम नगर है. कैसा? कि, सब संपदासे संयुक्त, अनेक प्रकारके मनुष्योंके समूहोंसे व्याप्त, अनेक रत्नोंसे संयुक्त ॥ ३५ ॥ जाली झरोखोंसे भई महलोंकी शोभासे शोभित, अनेक धर्मोंसे संयुक्त है. तहां हे राजन्! देवताओंकी पूजामें रत मैं वसता भया ॥ ३६ ॥

वैश्यजातिमें सुदेव नामसे मैं हूं ऐसा तुम जानो. मैंने साकल्यसे देवताओंको तृप्त किया है ॥ ३७ ॥ नानाप्रकारके दान देनेसे ब्राह्मणोंको तृप्त किया है, दीन अंधे गरीबोंको मैंने अनेक प्रकारसे अन्नदान दिया है ॥ ३८ ॥ हे राजन्! वह सब प्रारब्धसे हमारा निष्फल हुआ है. जैसे हमारा निष्फल हुआ सो तुमको कहता हूं ॥ ३९ ॥ हमारे संतान नहीं है, बंधु नहीं है, जो हमारी पारलौकिक क्रिया करैं ॥ ४० ॥ हे महाराज! जिसके सोला मासिक श्राद्ध नहीं होते उसको सैकड़ों श्राद्ध देनेसे प्रेतयोनि

वैश्योजात्यासुदेवोऽहंनाम्नाविदितमस्तुते ॥ हव्येनतर्पितादेवाःकव्येनपितरस्तथा ॥ ३७ ॥ विविधैर्दानयोगैश्चविप्राःसंतर्पितामया ॥
दीनांधकृपणेभ्यश्चदत्तमन्नमनेकधा ॥ ३८ ॥ तत्सर्वंनिष्फलंराजन्ममदैवादुपागतम् ॥ यथामेनिष्फलंजातंसुकृतंतद्वदामिते ॥ ३९ ॥
ममवैसंततिर्नास्तिनसुहृन्नचबांधवः ॥ नचमित्रंहिमेताद्दग्यःकुर्यादौर्ध्वदैहिकम् ॥४०॥ यस्यनस्यान्महाराजश्राद्धंमासिकषोडशम् ॥
प्रेतत्वंसुस्थिरंतस्यदत्तैःश्राद्धशतैरपि ॥४१॥ त्वमौर्ध्वदैहिकंकृत्वामामुद्धरमहीपते ॥ वर्णानांचैवसर्वेषांराजाबन्धुरिहोच्यते ॥४२॥
तन्मांतारयराजेंद्रमणिरत्नंददामिते ॥ यथामेसद्गतिर्भूयात्प्रेतयोनिश्चगच्छति ॥ ४३ ॥ तथाकार्यंत्वयावीरममचेदिच्छसिप्रियम् ॥
क्षुधातृषादिभिर्दुःखैःप्रेतत्वंदुःसहंमम ॥ ४४ ॥

नहीं जाती है ॥ ४१ ॥ हे राजन्! आप हमारी और्ध्वदैहिक क्रिया करके, प्रेतयोनिसे उद्धार करो. क्योंकि इस संसारमें संपूर्ण वर्णोंका बन्धु राजा कहा है ॥ ४२ ॥ हे राजेंद्र! इससे हमको तारो. जैसे हमारी श्रेष्ठ गति होय और प्रेतयोनि जाय. मैं तुमको मणिरत्न देता हूं ॥ ४३ ॥ हे वीर! जो आप हमारे प्यारकी इच्छा करतेहो, तो तुमको तैसा करना चाहिये. क्षुधा और प्यास आदि दुःखोंसे मुझे प्रेतपना दुःसह हुआ है ॥ ४४ ॥

इस वनमें बड़े स्वादके फल और आनंदकारी शीतल जल है. सो भूखमें हमको वे फल नहीं मिलते हैं और प्यासमें जल नहीं प्राप्त होता है॥४५॥ सो हे राजा! हमारी नारायणबलिविधि होय तथा वहां वेदमंत्रोंसे संपूर्ण और्ध्वदैहिक क्रिया होय ॥ ४६ ॥ तब मेरा प्रेतपना निश्चय नष्ट होय, इसमें संदेह नहीं है. वेदके मंत्र, तप, दान, सर्व जीवोंपरे दया, श्रेष्ठ शास्त्रका सुननां, विष्णुकी पूजा, और महात्माकी संगति, ये प्रेतयोनिके नाशके वास्ते हैं ऐसा मैंने सुना है ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ इसीसे तुमको प्रेतयोनिका नाश

स्वादूदकंफलंचास्तिवनेऽस्मिञ्छीतलंशिवम् ॥ नप्राश्नामिक्षुधार्तोऽहंतृषार्तोनजलंक्कचित् ॥ ४५ ॥ यदिमेहिभवेद्राजन्विधिर्नारायणेमहान् ॥ तदग्रेवेदमंत्रैश्चक्रियासर्वौर्ध्वदैहिकी ॥ ४६ ॥ तदानश्यतिमेनूनंप्रेतत्वंनात्रसंशयः ॥ वेदामंत्रास्तपोदानंदयासर्वत्रजंतुषु ॥ ४७ ॥ सच्छास्त्रश्रवणंविष्णोःपूजासज्जनसंगतिः ॥ प्रेतयोनिविनाशायभवंतीतिमयाश्रुतम् ॥ ४८ ॥ अतोवक्ष्यामितेविष्णुपूजांप्रेतत्वनाशिनीम् ॥ सुवर्णद्वयमानीयसुवर्णंन्यायसंचितम् ॥ तस्यनारायणस्यैकांप्रतिमांभूपकल्पयेत् ॥ ४९ ॥ पीतवस्त्रयुगच्छन्नांसर्वाभरणभूषिताम् ॥ स्नापितांविविधैस्तोयैरधिवास्ययजेत्ततः ॥ ५० ॥ पूर्वेतुश्रीधरंतस्यादक्षिणेमधुसूदनम् ॥ पश्चिमेवामनंदेवमुत्तरेचगदाधरम् ॥ ५१ ॥

करनेवाली विष्णुकी पूजा कहता हूं. सोला मासेका एक सुवर्ण सो न्यायसे कमाया सोना लेकर दो सुवर्णकी हे राजन्! १ नारायणकी मूर्ति बनानी ॥ ४९ ॥ उसे पीले रेसमी दो वस्त्र धारण कराकर संपूर्ण आभूषण पहिनाना; पीछे सुंगधित जलसे स्नान कराके सिंहासनपर विराजमान कर,पूजा करनी ॥ ५० ॥ उस मूर्तिके पूर्वमें श्रीधर भगवान्को पूजना, दक्षिणमें मधुसूदन भगवान्, पश्चिममें वामन भगवान्, तथा उत्तरमें गदाधर भगवान्को पूजना ॥ ५१ ॥

मध्यमें ब्रह्माको तथा महादेवको विधिसे गंध, अक्षत पुष्पादिकोंसे पूजना॥ ५२ ॥ पीछे प्रदक्षिणा करके, अग्निमें देवतोंको तृप्ति करके, घृत, दधि दूधसे विश्वेदेवोंको तृप्त करना ॥ ५३ ॥ पीछे स्नान कर, नम्र व सावधान हुवा यजमान नारायणके अगाड़ी विधिपूर्वक अपनी और्ध्वदैहिकी क्रिया करनी ॥ ५४ ॥ उस क्रियामें शास्त्रानुसार क्रोधलोभसे रहित हो, संपूर्ण श्राद्ध आरंभ करना तथा वृषोत्सर्ग करना ॥ ५५ ॥ ब्राह्मणोंको पीछे तेरह पद दान देना. शय्यादान देकर, प्रेतघट देना ॥ ५६ ॥ राजा पूछता है—हे प्रेत!

मध्येपितामहंचैवतथादेवंमहेश्वरम् ॥ पूजयेच्चविधानेनगंधपुष्पादिभिःपृथक् ॥५२॥ ततःप्रदक्षिणीकृत्यवह्नौसंतर्प्यदेवताः ॥ घृतेनदध्नाक्षीरेणविश्वेदेवांश्चतर्पयेत्॥५३॥ततःस्नातोविनीतात्मायजमानःसमाहितः॥ नारायणाग्रेविधिवत्स्वांक्रियामौर्ध्वदैहिकीम् ॥५४॥ आरभेतयथाशास्त्रंक्रोधलोभविवर्जितः ॥ कुर्याच्छ्राद्धानिसर्वाणिवृषस्योत्सर्जनंतथा ॥ ५५ ॥ ततःपदानिविप्रेभ्योदद्याच्चैवत्रयोदश ॥ शय्यादानंप्रदत्त्वाचघटंप्रेतस्यनिर्वपेत् ॥ ५६ ॥ राजोवाच ॥ कथंप्रेतघटंकुर्याद्दद्यात्केनविधानतः ॥ ब्रूहिसर्वानुकंपार्थंघटंप्रेतविमुक्तिदम् ॥ ५७ ॥ प्रेतउवाच ॥ साधुपृष्टंमहाराजकथयामिनिबोध ते ॥ प्रेतत्वंनभवेद्येनदानेनसुदृढेनच ॥ ५८ ॥ दानंप्रेतघटंनामसर्वाशुभविनाशनम् ॥ दुर्लभंसर्वलोकानांदुर्गतिक्षयकारकम् ॥ ५९ ॥

प्रेतघट कैसे करना और कौनसी विधिसे देना सो संपूर्ण लोगोंपर दया करनेके वास्ते प्रेतके मुक्ति देनेवाला घटदान कहो ॥ ५७ ॥ अब प्रेत कहता है—हे महाराज ! तुमने श्रेष्ठ बात पूछी है. सो मैं कहता हूं आप सुनो, जिस दृढदानके देनेसे प्रेतपना नहीं होय सो ॥ ५८ ॥ प्रेतघट नाम दान संपूर्ण पापोंको नाश करता है और दुर्गतिका नाश करता है. यह संपूर्ण लोकोंमें दुर्लभ है ॥ ५९ ॥

सुंदर तपेहुए सुवर्णका ब्रह्मा, महादेव, विष्णु और लोकपालसहित घट कराय दूध घृतसे भरकर भक्तिसे ब्राह्मणंको नमस्कार करके देवो· और सैंकड़ों दान देवोगे तौभी क्या है ? ॥ ६० ॥ ब्रह्मा, शंकर. इन्होंकोभी मध्यमें पूजना, पूर्वआदि दिशोंमें उस घटकेभी कंठमें लोकपालोंको अनुक्रमसे पूजना ॥ ६१ ॥ हे राजन् ! ऐसे विधिसे धूप, पुष्प, चंदन, इन्होंसें पूजा कर पीछे दूध घृतसहित सुवर्णघटका दान देना ॥ ६२ ॥ यह दान सब दानोंसे अधिक महापापोंका नाश करनेवाला है. सो हे राजन् !

संतप्तहाटकमयंतुघटंविधायब्रह्मेशकेशवयुतंसहलोकपालैः ॥ क्षीराज्यपूर्णविवरंप्रणिपत्यभक्त्याविप्रायदेहितवदानशतैःकिमन्यैः
॥ ६० ॥ ब्रह्मामध्येतथाविष्णुःशंकरःशंकरोऽव्ययः ॥ प्राच्यादिषुचतत्कंठेलोकपालान्क्रमेणतु ॥ ६१ ॥ संपूज्यविधिवद्राजन्धूपैःकुसु
मचंदनैः ॥ ततोदुग्धाज्यसंहितंघटंदद्याद्धिरण्मयम् ॥ ६२ ॥ सर्वदानाधिकंचैतन्महापातकनाशनम् ॥ कर्तव्यंश्रद्धयाराज
न्प्रेतत्वविनिवृत्तये ॥ ६३ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ एवंसंजल्पतस्तस्यप्रेतेनसहकाश्यप ॥ सेनाजगामानुपदंहस्त्यश्वरथसं
कुला ॥ ६४ ॥ ततोबलेसमायातेदत्त्वाराज्ञेमहामणिम् ॥ नमस्कृत्यपुनःप्रार्थ्यप्रेतोऽदर्शनमेयिवान् ॥ ६५ ॥ तस्माद्वनाद्विनि
ष्क्रम्यराजापिस्वपुरंययौ ॥ स्वपुरंचसमासाद्यतत्सर्वंप्रेतभाषितम् ॥ ६६ ॥

प्रेतभावकी निवृत्तिके वास्ते श्रद्धासे करना ॥ ६३ ॥ अब श्रीभगवान् कहते हैं—हे गरुड ! ऐसे बभ्रुवाहन राजाका प्रेतसे संभाषण होता था इतनेहीमें हाथी, घोडा, रथ इन्होंके साथ सेना आवती भई ॥ ६४ ॥ तब सेना आवती देख राजाको महामणि देकर नमस्कार कर क्रियाकी प्रार्थना कर प्रेत अलक्ष्य होता भया ॥ ६५ ॥ उस वनसे निकलकर राजा अपने पुरमें जाता भया. अपने पुरमें प्राप्त होके वह सब प्रेतकी कही भई— ॥ ६६ ॥

हे गरुड! औंर्ध्वदेहिकी क्रिया विधिसे करता भया. उस पुण्यके देनेके प्रभावसे प्रेत मुक्तिको प्राप्त हो, स्वर्गमें जाता भया ॥ ६७ ॥ दूसरेने दियेभये श्राद्धमें प्रेत श्रेष्ठगतिको प्राप्त होता भया. तो पुत्रके दिये श्राद्धसे स्वर्गमें जाय इसमें क्या कहना ? ॥ ६८ ॥ यह पवित्र इतिहास जो सुनै और सुनावै वे दोनों पापआचरण करनेवाले हों तौभी प्रेतगतिको नहीं प्राप्त होवैं ॥ ६९ ॥ इति गरुडपुराणे सारोद्धारे ज्ञानबोधिनीभाषाटीकायां बभ्रुवाहनप्रेतसंस्कारो नाम सप्तमोऽध्याय: ॥७॥ ॥ अब गरुड पूँछते हैं—हे प्रभो! इस

चकारविधिवत्पक्षिन्नौर्ध्वदैहिकजंविधिम् ॥ तस्यपुण्यप्रदानेनप्रेतोमुक्तोदिवंययौ ॥ ६७ ॥ श्राद्धेनपरदत्तेनगतःप्रेतोऽपिस
द्गतिम् । किंपुनःपुत्रदत्तेनपितायातीतिचाद्भुतम् ॥ ६८ ॥ इतिहासमिमंपुण्यंशृणोतिश्रावयेच्चयः । नतौप्रेतत्वमायातःपापाचारयु
तावपि ॥ ६९ ॥ इतिश्रीग०सारोद्धारेबभ्रुवाहनप्रेतसंस्कारोनामसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ ॥ गरुडउवाच ॥ आमुष्मिकींक्रियांसर्वां
वदसुकृतिनांमम ॥ कर्तव्यासायथापुत्रैस्तथाचकथयप्रभो ॥ १ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ साधुपृष्टंत्वयाताक्ष्र्यमानुषाणांहितायवै ॥
धार्मिकार्हंचयत्कृत्यंतत्सर्वंकथयामिते ॥ २ ॥ सुकृतीवार्धकेदृष्ट्वाशरीरंव्याधिसंयुतम् ॥ प्रतिकुलान्ग्रहांश्चैवप्राणघोषस्यचाश्रुतिम्
॥ ३ ॥ तदास्वमरणंज्ञात्वानिर्भयःस्याद्तंद्रितः ॥ अज्ञातज्ञातपापानांप्रायश्चित्तंसमाचरेत् ॥ ४ ॥

लोककी संपूर्णक्रिया सुकृती पुरुषोंकी कहो जैसे वो पुत्रोंसे करनेयोग्य है? ॥ १ ॥ अब भगवान् कहते हैं--हे गरुड! तुमने मनुष्योंके हितके लिये श्रेष्ठ बात पूछी है. धर्मात्मा पुरुषोंके योग्य जो कृत्य सो संपूर्ण तुम्हारेको कहता हूं ॥ २ ॥ सुकृती वृद्धाअवस्थामें अपना शरीर रोगसहित देख, प्रतिकूल ग्रहोंको देख, प्राणशब्द सुननेमें नहीं आवै ॥ ३ ॥ तब अपना मरना जान, निर्भय हुवा इंद्रियोंको जीत, जान अजान संपूर्ण पापोंका प्रायश्चित्त आचरण करना चाहिये ॥ ४ ॥

जब आतुरकाळ आवै तब स्नान करना, शालिग्रामस्वरूपी विष्णुका पूजन करना ॥५॥ गंध, पुष्प, केशर, तुलसीदलोंसे धूप दीप बहुत मोदकादि नैवेद्यसे पूजन करना ॥६॥ फिर ब्राह्मणोंको दक्षिणा देंं, भोजन कराय, अष्टाक्षरी मंत्र जपना अथवा द्वादशाक्षरी जपना ॥ ७ ॥ विष्णुसहस्रनाम वा शिवसहस्रनाम पढ़ना वा सुनना. अहो ! हरिका नाम मनुष्योंके कानमें प्राप्त भया हो तो वह पापोंको हरैहै॥८॥रोगीके नजीक प्राप्त होकर, बांधवोंकरके शोच करना अयोग्य है. कारण मेरा पवित्र नाम और ध्यान वारंवार स्मरण करना

यदास्यादातुरःकालस्तदास्नानंसमारभेत् ॥ पूजनंकारयेद्विष्णोःशालग्रामस्वरूपिणः ॥५॥ अर्चयेद्गंधपुष्पैश्चकुंकुमैस्तुलसीदलैः ॥
धूपैर्दीपैश्चनैवेद्यैर्बहुभिर्मोदकादिभिः ॥ ६ ॥ दत्त्वाचदक्षिणांविप्रान्नैवेद्यादेवभोजयेत् ॥ अष्टाक्षरंजपेन्मंत्रंद्वादशाक्षरमेवच ॥७॥
संस्मरेच्छृणुयाच्चैवविष्णोर्नामशिवस्यच ॥ हरेर्नामहरेत्पापंनृणां श्रवणगोचरम् ॥८॥ रोगिणोऽतिकमासाद्यशोचनीयंनबांधवैः ॥
स्मरणीयंपवित्रंमेनामध्येयंमुहुर्मुहुः ॥ ९ ॥ मत्स्यःकूर्मोवराहश्चनारसिंहश्चवामनः ॥ रामोरामश्चकृष्णश्चबुद्धःकल्कीतथैवच ॥१०॥
एतानिदशनामानिस्मर्तव्यानिसदाबुधैः ॥ समीपेरोगिणोब्रूयुर्बांधवास्तेप्रकीर्तिताः ॥११॥ कृष्णेतिमंगलंनामयस्यवाचिप्रवर्तते ॥
तस्यभस्मीभवंत्याशुमहापातककोटयः ॥१२॥ म्रियमाणोहरेर्नामगृणन्पुत्रोपचारितम् ॥ अजामिलोऽप्यगाद्धामकिंपुनःश्रद्धयागृणन् ॥१३॥

॥ ९ ॥ मत्स्य, कूर्म, वराह, नरसिंह, वामन, परशुराम, रामचंद्र, श्रीकृष्ण, बुद्ध, कल्की, ॥ १० ॥ ये दश नाम सदाही बुद्धिवानोंको स्मरण करनेयोग्य हैं. जो रोगीके समीप कहते हैं वेही बांधव कहलाते हैं ॥ ११ ॥ कृष्ण ऐसा मांगलिक नाम जिसकी वाणीमें वर्तताहै उसकी महापापोंकी कोटिभी तत्काल भस्म होतीहै ॥१२॥ मरताहुवा अजामिळ पुत्रनिमित्तसे श्रीहरिका नाम उच्चारण कर, भगवद्धामको प्राप्त होता भया; सो जो श्रद्धासे भगवत्स्मरण करैं वह भगवद्धाम प्राप्त होय उसका क्या अधिक कहना ? ॥१३॥

दुष्टचित्तसेभी स्मरण करनेपर श्रीहरि उनके पापोंको हरते हैं. जैसे भूलसेभी स्पर्श करीभई अग्नि दग्ध कर देती है ॥ १४ ॥ सो हे गरुड ! हरिनामकी जितनी पाप नाश करनेमें शक्ति है उतनी पातकी पुरुषकी पाप करनेकी शक्ति नहीं है ॥ १५ ॥ यमराज अपने दूतोंसे कहते हैं कि—हे दूतो ! नास्तिक मनुष्यको लावो और हरिनाम स्मरण करनेवालेको मति लावो ॥ १६ ॥ अच्युत, केशव, राम, नारायण, कृष्ण, दामोदर, वासुदेव, हरि, श्रीधर, माधव, गोपिकावल्लभ, जानकीनाथ, रामचंद्र इन्होंको हम भजते हैं ऐसे जो भगवन्नाम भज रहे हैं ॥ १७ ॥ और हे कमलनयन ! हे वासुदेव ! हे विष्णो ! हे धरणीधर ! हे अच्युत ! हे शंखचक्रपाणे ! हमारे

हरिर्हरतिपापानिदुष्टचित्तैरपिस्मृतः ॥ अनिच्छयापिसंस्पृष्टोदहत्येवहिपावकः ॥ १४ ॥ हरेर्नामसुयाशक्तिःपापानिर्हरणेद्विज॥ तावत्कर्तुंसमर्थोनपातकंपातकीजनः ॥ १५ ॥ किंकरेभ्योयमःप्राहनयध्वंनास्तिकंजनम् ॥ नैवानयतभोदूताहरिनामस्मरंनरम् ॥ १६ ॥ अच्युतंकेशवंरामनारायणंकृष्णदामोदरंवासुदेवंहरिम् ॥ श्रीधरंमाधवंगोपिकावल्लभंजानकीनायकंरामचंद्रंभजे ॥ १७ ॥ कमलनयनवासुदेवविष्णोधरणिधराच्युतशंखचक्रपाणे ॥ भवशरणमितीरयंतियेवैत्यजभटदूरतरेणतानपापान् ॥१८॥ तानानयध्वमसतोविमुखान्मुकुंदपादारविंदमकरंदरसादजस्रम्॥निष्किंचनैःपरमहंसकुलैरसज्ञैर्जुष्टाद्गृहेनिरयवर्त्मनिबद्धतृष्णान् ।१९।

आप शरणरूप होवो ऐसे जो भजन कररहें उन निष्पापियोंको हे दूतो ! दूरसे त्याग देना अर्थात् ! नजीक मत जाना ॥ १८ ॥ उन पापियोंको पकड़ लाना जो मुकुंद भगवान्के चरणारविंदरूपी मकरंद अर्थात् सुगंधित रससे निरंतर विमुख हैं. जो रसके जाननेवाले निष्किंचन परमहंसोंके कुलसे सेवित हैं उनसे विमुख और नरकके मार्गमेंही बांधी है तृष्णा जिन्होंने ऐसे जनको लाना ॥ १९ ॥

जिन्होंकी जिह्वा भगवद्गुणानुवाद और भगवन्नाम नहीं बोलैहै और चित्त भगवत्के चरणारविंदको नहीं स्मरण करता है. शिर कदापि नमस्कार नहीं करै है और नहीं किया है भगवत् आराधन जिनने ऐसे दुष्टोंको लावो ॥ २० ॥ हे पक्षींद्र ! तिसीसे विष्णुका नामोच्चारण जगत्को मांगलिक है और महान् पापोंका परम प्रायश्चित्त जानो ॥२१॥ करे भये भी प्रायश्चित्त नारायणसें विमुखको नहीं पवित्र करते हैं. जैसे नदी मदिराके घटको नहीं पवित्र करती हैं ॥ २२ ॥ कृष्णनामसे गया है जिनका पाप ऐसे पुरुष नरकमें नहीं पड़ते हैं. यम और यमदूतोंको स्वप्नमेंभी नहीं देखतें हैं ॥ २३ ॥ मांस, हाड़, व रक्त, इनका बना शरीरवाला जो मनुष्य वैतरणीमें अंतसमयमें गोदान ब्राह्मणोंको देवे हैं और

जिह्वानवक्तिभगवद्गुणनामधेयंचेतश्चनस्मरतितच्चरणारविंदम् ॥ कृष्णायनोनमतियच्छिरएकदापितानानयध्वमसतोऽकृतविष्णुकृत्यान् ॥ २० ॥ तस्मात्संकीर्तनंविष्णोर्जगन्मंगलमंहसाम् ॥ महतामपिपक्षींद्रविद्ध्येकांतिकनिष्कृतिम् ॥ २१ ॥ प्रायश्चित्तानिचीर्णानिनारायणपराङ्मुखम् ॥ ननिष्पुनंतिदुर्बुद्धिंसुराकुंभमिवापगाः ॥ २२ ॥ कृष्णनाम्नाननरकंपश्यंतिगतकिल्बिषाः ॥ यमंचतद्भटांश्चैवस्वप्नेऽपिनकदाचन ॥ २३ ॥ मांसास्थिरक्तवत्कायोवैतरण्यांपतेन्नरः ॥ योंऽतेदद्याद्द्विजेभ्यश्चनंदनंदनगामिति ॥ २४ ॥ अतः स्मरेन्महाविष्णोर्नामपापौघनाशनम् ॥ गीतासहस्रनामानिपठेद्वाशृणुयादपि ॥ २५ ॥ एकादशीव्रतंगीतांगंगांबुतुलसीदलम् ॥ विष्णोःपादांबुनामानिमरणेमुक्तिदानिच॥२६॥ततःसंकल्पयेदन्नंसघृतंचसकांचनम्॥सवत्साधेनवोदेयाःश्रोत्रियायद्विजातये ॥ २७॥

नंदनंदन ऐसे बोले हैं सो नरकमें नहीं पड़ते हैं अर्थात् जन्ममरणसे छूट, मोक्षको प्राप्त होते हैं ॥ २४ ॥ इसीसे पापोंके समूहोंको नाश करनेवाला विष्णुका नामस्मरण करना. गीता, सहस्र नाम पढ़ना अथवा ब्राह्मणके मुखसे श्रवण करना ॥ २५ ॥ एकादशीका व्रत, गीता, गंगाजल, तुलसीदल, विष्णुका चरणामृत और भगवन्नाम ये मरणसमयमें मुक्तिके देनेवाले हैं ॥ २६ ॥ इसीसे अंतमें अन्नदान घृत और सुवर्णसहित संकल्प करना, वेदपाठी ब्राह्मणको बछरासहित गोदन देना ॥ २७ ॥

अंतमें जो मनुष्य थोड़ा अथवा बहुत देवै है हे गरुड़ ! वो अक्षय होता है और देनेवाला पुत्र आनंदसुख भोगता है ॥ २८ ॥ अंतकालमें श्रेष्ठपुत्रने पितामाताको सर्व दान देना. धर्ममें निपुण लोग इसीसे लोकमें पुत्रकी वांछा करते हैं ॥ २९ ॥ पृथ्वीपर स्थित आधे मूंदगये हैं नेत्र जिनके ऐसे पिताको देखकर, पुत्रोंकरके उनके पूर्वसंचय किये धनमें तृष्णा नहीं करना ॥ ३० ॥ श्रेष्ठपुत्र जो दान देताहै उस दानके प्रभावसे जहांतक जीवै तहांतक परम सुखी होताहै. परलोकमें जानेवाला मार्गमें आतुरदानसे दुःखको नहीं प्राप्त होता ॥ ३१ ॥

अंतेजनोयद्ददातिस्वल्पंवायदिवाबहु ॥ तदक्षयंभवेत्ताक्ष्यर्यत्पुत्रश्चानुमोदते ॥ २८ ॥ अंतकालेतुसत्पुत्रःसर्वदानानिदापयेत् ॥ यत्त
दर्थंसुतोलोकेप्रार्थ्यतेधर्मकोविदैः ॥ २९ ॥ भूमिष्ठंपितरंदृष्ट्वाअर्धोन्मीलितलोचनम् ॥ पुत्रैस्तृष्णानकर्तव्यातद्धनेपूर्वसंचिते ॥ ३० ॥
सतद्ददातिसत्पुत्रोयावज्जीवत्यसौचिरम् ॥ अतिवाहस्तुतान्मार्गेदुःखंनलभतेयतः ॥ ३१ ॥ आतुरेचोपरागेचद्वयंदानंविशिष्यते ॥
अतोऽवश्यंप्रदातव्यमष्टदानंतिलादिकम् ॥ ३२ ॥ तिलालोहंहिरण्यंचकार्पासोलवणंतथा ॥ सप्तधान्यंक्षितिर्गावएकैकंपावनंस्मृत
म् ॥ ३३ ॥ एतदष्टमहादानंमहापातकनाशनम् ॥ अंतकालेप्रदातव्यंशृणुतस्यचसत्फलम् ॥ ३४ ॥ ममस्वेदसमुद्भूताःपवित्रास्त्रिविधा
स्तिलाः ॥ असुरादानवादैत्यास्तृप्यंतितिलदानतः ॥ ३५ ॥

एक तो आतुरसमयमें दूजा ग्रहणसमयमें ये दो दान श्रेष्ठ कहे हैं. इसीसे तिलादिक अष्टदानभी अवश्य देनेयोग्य हैं ॥ ३२ ॥ तिल, लोह, सुवर्ण, कपास, लवण, सप्तधान्य, पृथ्वी, गौ, ये एकेक अंतमें पवित्र करनेवाले कहे हैं ॥ ३३ ॥ ये अष्ट महादान महापापोंके नाश करनेवाले कहे हैं. इन्होंको अंतसमयमें देना. इनका जो फल है सो सुनो ॥ ३४ ॥ हमारे प्रस्वेदसें अर्थात् पसीनासे प्रगट भये ऐसे पवित्र तीन जातके तिल हैं सो तिलोंके दानसे असुर दानव और दैत्य तृप्त होते हैं ॥ ३५ ॥

श्वेत, कृष्ण और कपिलवर्ण इन तीन जातके दानकिये तिल, वाणी मन शरीरसे किये तीनों प्रकारके पापोंको नाश करते हैं ॥ ३६ ॥ पृथ्वीपर हाथ धरकर, लोहदान दे तो यमकी सीममें तथा उनके मार्गमें नहीं जाता है ॥ ३७ ॥ कुठार, मुसल, दंड, खड्ग, छूरी ये शस्त्र यमके हाथमें पापियोंके दंडके लियेहैं ॥ ३८ ॥ उन यमके शस्त्रोंकी प्रसन्नताके वास्ते वे दान कहे हैं. तिसीसे यमलोकमें सुख देनेवाला लोहदान देना ॥ ३९ ॥ उरण, श्यामसूत्र, शुंडामर्क, उदुंवर, शेष और बल ये यमके महादूत लोहदानसे

तिलाःश्वेतास्तथाकृष्णादानेनकपिलास्तिलाः ॥ संहरंतित्रिधापापंवाङ्मनःकायसंचितम् ॥ ३६ ॥ लोहदानंचदातव्यंभूमियुक्तेनपाणिना ॥ यमसीमांनचाप्नोतिनगच्छेत्तस्यवर्त्मनि ॥ ३७ ॥ कुठारोमुसलोदंडःखड्गश्चछुरिकातथा ॥ शस्त्राणियमहस्तेचनिग्रहेपापकर्मणाम् ॥ ३८ ॥ यमायुधानांसंतुष्ट्यैदानमेतदुदाहृतम् ॥ तस्माद्द्याल्लोहदानंयमलोकेसुखावहम् ॥ ३९ ॥ उरणःश्यामसूत्रश्चशुंडामर्कोऽप्युदुंबरः ॥ शेषंबलोमहादूतालोहदानात्सुखप्रदाः ॥४०॥ शृणुतार्क्ष्यपरंगुह्यंदानानांदानमुत्तमम् ॥ दत्तेनतेनतुष्यंतिभूर्भुवःस्वर्गवासिनः ॥ ४१ ॥ ब्रह्माद्याऋषयोदेवाधर्मराजसभासदाः ॥ स्वर्णदानेनसंतुष्टाभवंतिवरदायकाः ॥ ४२ ॥ तस्माद्देयंस्वर्णदानंप्रेतोद्धरणहेतवे ॥ नयातियमलोकंसःस्वर्गतितातगच्छति ॥ ४३ ॥

सुख देतेहैं ॥ ४० ॥ हे गरुड ! परमगुप्त दानोंमें उत्तम दान सुनो, जिसके देनेसे भूर्भुवःस्वर्गवासी ये सब प्रसन्न होते हैं ॥ ४१ ॥ ब्रह्मादिक, ऋषि, देवता-धर्मराजकी सभामें रहनेवाले ये सुवर्णदानसे प्रसन्न और वर देनेवाले होते हैं ॥ ४२ ॥ तिसीसे प्रेतके उद्धारके वास्ते सुवर्णदान देना. हे गरुड ! सुवर्णदानसे. यमलोकमें नहीं जाता है किन्तु स्वर्गको प्राप्त होता है ॥ ४३ ॥

सो दानी बहुत कालतक स्वर्गमें बसता है पीछे पृथ्वीपर राजा होताहै. कैसा राजा ? रूपवान्, धर्मात्मा, वक्ता, लक्ष्मीवान्, अतुलपुरुषार्थी ऐसा होता है ॥ ४४ ॥ कपासके दानसे दूतोंसे भय नहीं होताहै. लवणदान देनेसेभी यमसे भय नहीं होताहै ॥ ४५ ॥ लोह, लवण, कपास, तिल, सुवर्ण इन दानोंसे चित्रगुप्तादि यमके पुरमें रहनेवाले प्रसन्न रहतेहैं ॥ ४६ ॥ सप्तधान्यके देनेसे धर्मध्वज प्रसन्न रहता है और अगाडी कहैंगे वे तीनों द्वारपर रहनेवाले प्रसन्न होतेहैं ॥ ४७ ॥ चांवल, यव, गेहूं,

चिरंवसेत्सत्यलोकेततोराजाभवेदिह ॥ रूपवान्धार्मिकोवाग्मीश्रीमानतुलविक्रमः ॥४४॥ कार्पासस्यत्रदानेनदूतेभ्योनभ
यंभवेत् ॥ लवणंदीयतेयच्चतेननैवभयंयमात् ॥ ४५ ॥ अयोलवणकार्पासतिलकांचनदानतः ॥ चित्रगुप्तादयस्तुष्टायमस्य
पुरवासिनः ॥ ४६ ॥ सप्तधान्यप्रदानेनप्रीतोधर्मध्वजोभवेत् ॥ तुष्टाभवंतियेन्येऽपित्रिषुद्वारेष्वधिष्ठिताः ॥ ४७ ॥ व्रीहयो
यवगोधूममुद्गमाषाःप्रियंगवः ॥ चणकाःसप्तमाज्ञेयाःसप्तधान्यमुदाहृतम् ॥४८॥ गोचर्ममात्रंवसुधादत्तापात्रेविधानतः ॥
पुनातिब्रह्महत्यायादृष्टमेतन्मुनीश्वरैः ॥४९॥ नव्रतेभ्योनतीर्थेभ्योनान्यद्दानाद्विनश्यति ॥ राज्येकृतंमहापापंभूमिदाना
द्विलीयते ॥ ५० ॥ पृथिवींसस्यसंपूर्णांयोददातिद्विजाययः ॥ सप्रयातींद्रभुवनंपूज्यमानःसुरासुरैः ॥ ५१ ॥

मूंग, उड़द, प्रियंगु, और चना ये सप्त धान्य जानने ॥ ४८ ॥ गौके चर्म जितनी पृथ्वी पात्रको विधिसे दी भई ब्रह्महत्यासेभी पवित्र करतीहै. यह मुनीश्वरोंने निश्चय किया है ॥ ४९ ॥ राज्यमें किया हुवा पाप व्रतसे तीर्थसे और दानोंसे नहीं नाश होताहै केवल पृथिवीदानसे नष्ट होता है ॥ ५० ॥ धान्यसे शोभित पृथ्वी जो ब्राह्मणको देता है वो देवता असुरोंसे पूज्य हुवा इंद्रभवनमें जाताहै ॥ ५१ ॥

हे गरुड ! और दान बहुत थोडे फल देते हैं. पृथ्वीदानका पुण्य दिन दिन बढ़ता है ॥ ५२ ॥ जो राजा होकर, ब्राह्मणको पृथ्वी नहीं देता है वो दूसरे जन्ममें ग्राममें कुटीकोभी प्राप्त नहीं होता और जन्मजन्ममें दरिद्री होताहै ॥ ५३ ॥ पृथ्वीदानको राजापनाके अभिमानसे नहीं देनेसे जहांतक शेषजी पृथ्वी धारण करैं तहांतक नरकमें बसता है ॥ ५४ ॥ इसीसे राजा होकर, पृथ्वीदानही देना और वर्णोंको पृथ्वीदानकी जगा गोदान मैंने कहा है ॥ ५५ ॥ तिसीसे अंतधेनु देनी तथा रुद्रधेनु देनी,

अत्यल्पफलदानिस्युरन्यदानानिकाश्यप ॥ पृथिवीदानजंपुण्यमहन्यहनिवर्द्धते ॥ ५२ ॥ योभूत्वाभूमिपोभूमिंनोददातिद्विजातये ॥ सनाप्नोतिकुटींग्रामेदरिद्रीस्याद्भवेभवे ॥ ५३ ॥ अदानाद्भूमिदानस्यभूपतित्वाभिमानतः ॥ निवसेन्नरकेयावच्छेषोधारयतेधराम् ॥ ५४ ॥ तस्माद्भूमीश्वरोभूमिदानमेवप्रदापयेत् ॥ अन्येषांभूमिदानार्थंगोदानंकथितंमया ॥ ५५ ॥ ततोऽतधेनुर्दातव्यारुद्रधेनुं प्रदापयेत् ॥ ऋणधेनुंततोदत्त्वामोक्षधेनुंप्रदापयेत् ॥ ५६ ॥ दद्याद्वैतरणींधेनुंविशेषविधिनाखग ॥ तारयंतिनरंगावस्त्रिविधाच्चैवपातकात् ॥ ५७ ॥ बालत्वेयच्चकौमारेयत्पापंयौवनेकृतम् ॥ वयःपरिणतौयच्चयच्चजन्मान्तरेष्वपि ॥ ५८ ॥ यन्निशायांतथाप्रातर्यन्मध्याह्नापराह्णयोः ॥ संध्ययोर्यत्कृतंपापंकायेनमनसागिरा ॥ ५९ ॥

ऋणधेनु देनी ॥ ५६ ॥ हे गरुड ! समग्र विधिसे वैतरणी गौ देनी. गोदान तीनों पापोंसे तारता है ॥ ५७ ॥ बालपनमें, कुमारअवस्थामें, यौवनअवस्थामें, वृद्धा-अवस्थामें और जन्मांतरमें जो पाप किया हुवा है ॥ ५८ ॥ जो रात्रिमें, प्रातःकाल, मध्याह्न वा सायंकालमें किया जाता है, जो संध्यासमयमें किया है, वा शरीर मन,
९ वाणीसे किया है ॥ ५९ ॥

गौकी पुच्छ ग्रहण कर पगसे नावस्पर्श कर ब्राह्मणके सन्मुख ले, ये मंत्र बोलना ॥ ७६ ॥ संसारसमुद्रमें डूबरहे, शोक तापरूपी तरंगोंसे दुःखी होरहे ऐसे हे जगन्नाथ! शरण आयेपर दया करनेवाले आप हमारी रक्षा करो ॥ ७७ ॥ हे भगवद्रूप ब्राह्मण ! हे पृथ्वीके देव ! दक्षिणासहित वैतरणी गौ तुमको दिया है. तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ॥ ७८ ॥ यमके महाघोर मार्गमें वह सौ योजन विस्तृत वैतरणी नदी है उसको तिरनेके वास्ते यह गौ देता हूं. तुम वैतरणीरूप हो इसीसे नमस्कार हो ॥ ७९ ॥

पुच्छंसंगृह्यधेनोस्तुनावमाश्रित्यपादतः ॥ पुरस्कृत्यततोविप्रमिमंमंत्रमुदीरयेत् ॥ ७६ ॥ भवसागरमग्नानांशोकतापोर्मिदुःखिनाम् ॥
त्राताल्वंहिजगन्नाथःशरणागतवत्सलः ॥७७॥ विष्णुरूपद्विजश्रेष्ठमामुद्धरमहीसुर ॥ संदक्षिणामयादत्तात्तुभ्यंवैतरणींनमः ॥७८॥
यममार्गेमहाघोरेतांनदींशतयोजनाम् ॥ तर्तुकामोददाम्येतांतुभ्यंवैतरणींनमः ॥ ७९ ॥ धेनुकेमांप्रतीक्षस्वयमद्वारमहापथे ॥ उत्ता
रणार्थंदेवेशिवैतरण्यैनमोऽस्तुते ॥ ८० ॥ गावोमेअग्रतःसंतुगावोमेसंतुपृष्ठतः ॥ गावोमेहृदयेसंतुगवांमध्येवसाम्यहम् ॥ ८१ ॥
यालक्ष्मीःसर्वभूतानांयाचदेवेप्रतिष्ठिता ॥ धेनुरूपेणसादेवीममपापंव्यपोहतु ॥ ८२ ॥ इतिमंत्रैश्चसंप्रार्थ्यसांजलिर्धेनुकांयमम् ॥
सर्वंप्रदक्षिणीकृत्यब्राह्मणायनिवेदयेत् ॥ ८३ ॥

हे गौ ! मेरेको यमद्वारके महापथमें तिरनेके लिये दृष्टि कर. हे देवि ! वैतरणीरूप तुमको नमस्कार है ॥ ८० ॥ वे गौ हमारे अगाड़ी होवैं, गउवैं हमारे पीछे होवैं, गउवैं हमारे हृदयमें रहैं, गावोंके मध्य हमारा वास होवै ॥ ८१ ॥ जो लक्ष्मी संपूर्ण भूत प्राणीमें है, जो लक्ष्मी मनुष्य राजा और देवराजामें है वह देवी गौरूपसे हमारे पाप नाश करें ॥ ८२ ॥ ऐसे मंत्रोंसे हाथ जोड ब्राह्मणके साथ गौको तथा यमराजको परिक्रमा कर ब्राह्मणको देदेना ॥ ८३ ॥

हे गरुड ! ऐसे विधिसे जो वैतरणी गौ देता है वो धर्ममार्गसे धर्मराजकी सभाके मध्य जाता है ॥८४॥ सावधान शरीर रहै तबतक वैतरणीके व्रतका आचरण करना, उस नदीके तिरनेकी कामनावाले विवेकीने गौदान देना॥८५॥ हे गरुड ! गोदान देनेसे वह नदी महामार्गमें नहीं आती है. तिससे पुण्यकामोंमें सदा गौदान देना ॥८६॥ गंगादि सब तीर्थोंमें, ब्राह्मणके गृहमें, चंद्रमा सूर्यके ग्रहणमें, संक्रांतिमें, अमावस्याके दिन ॥८७॥ मकर, कर्क, मेष, तुलाकी संक्रांतिके दिन, व्यतीपात, युगादिकोंमें अर्थात्

एवंदद्याद्विधानेनयोगांवैतरणींखग॥सयातिधर्ममार्गेणधर्मराजसभांतरे ॥८४॥ स्वस्थावस्थशरीरेतुवैतरण्याव्रतंचरेत्॥देयाचविदुषा धेनुस्तांनदींतर्तुमिच्छता ॥८५॥ सानायातिमहामार्गेगोदानेननदीखग ॥ तस्मादवश्यंदातव्यंपुण्यकालेषुसर्वदा ॥ ८६ ॥ गंगादि सर्वतीर्थेषुब्राह्मणावसथेषुच ॥ चंद्रसूर्योपरागेषुसंक्रांतौदर्शवासरे ॥ ८७ ॥ अयनेविषुवेचैवव्यतीपातेयुगादिषु ॥ अन्येषुपुण्यकाले षुदद्याद्गोदानमुत्तमम् ॥८८॥ यदैवजायतेश्रद्धापात्रंसंप्राप्यतेयदा ॥ सएवपुण्यकालःस्याद्यतःसंपत्तिरस्थिरा ॥ ८९॥ अस्थिराणि शरीराणिविभवोनैवशाश्वतः ॥ नित्यंसन्निहितोमृत्युःकर्तव्योधर्मसंचयः ॥ ९० ॥ आत्मवित्तानुसारेणतत्रदानमनंतकम् ॥ देयंविप्रा यविदुषेस्वात्मनःश्रेयइच्छता ॥ ९१ ॥ अल्पेनापिहिवित्तेनस्वहस्तेनात्मनेकृतम् ॥ तदक्षय्यंभवेद्दानंतत्कालंचोपतिष्ठति ॥ ९२ ॥

अक्षयतृतीयादिकोंमें औरभी पुण्यकालोंमें गोदान देना ॥८८॥ जब श्रद्धा होजाय, जब पात्र प्राप्ति होजाय वही पुण्यकाल है. क्योंकि संपदा चंचल है ॥ ८९ ॥ शरीर और वैभव सदा रहता नहीं मृत्यु नित्य नजीक रहता है इसीसे धर्मसंचय करना ॥ ९० ॥ अपने वैभवके अनुसार तहां दान दिया अनंत है और दान अपने आत्माके कल्याणकी इच्छावालेने विज्ञानी ब्राह्मणको देना ॥ ९१ ॥ थोड़े धनसेभी अपनेवास्ते अपने हाथसे किया दान अक्षय होता है. उसी कालमें प्राप्त होता है ॥ ९२ ॥

ग्रहणं किया है परलोकभोग्य जिनसे ऐसा जीव महा मार्गमें सुखसे जाता है नहीं तो जीव क्लेश पाता है ॥ ९३ ॥ जो जो दान पृथ्वीपर मनुष्य देते हैं वे वे दान यममार्गमें अगाडी स्थित रहते हैं ॥ ९४ ॥ महापुण्यके प्रभावसे मनुष्यजन्म प्राप्त होता है, उसको पाकर, धर्मआचरण करता है सो परमगतिको प्राप्त होता है ॥ ९५ ॥ मनुष्य धर्म नहीं जानकर, दुःख पाता है, जन्ममरण प्राप्त होता है, मनुष्यजन्मकी सफलता तो केवल धर्मसेवनही है ॥ ९६ ॥ धन, पुत्र, स्त्री, शरीर, और बांधवादि ये

गृहीतदानपाथेयःसुखंयातिमहाध्वनि ॥ अन्यथाक्लिश्यतेजंतुःपाथेयरहितःपथि ॥ ९३ ॥ यानियानिचदानानिदत्तानि भुविमानवैः ॥ यमलोकपथेतानिह्युपतिष्ठंतिचाग्रतः ॥ ९४ ॥ महापुण्यप्रभावेणमानुषंजन्मलभ्यते ॥ यस्तत्प्राप्यचरेद्धर्मंसयाति परमांगतिम् ॥ ९५ ॥ अविज्ञायनरोधर्मंदुःखमायातियातिच ॥ मनुष्यजन्मसाफल्यंकेवलंधर्मसेवनम् ॥ ९६ ॥ धनपुत्रकलत्रादिशरीरमपिबांधवः ॥ अनित्यंसर्वमेवेदंतस्माद्धर्मंसमाचरेत् ॥ ९७ ॥ तावद्बंधुःपितातावद्यावज्जीवतिमानवः ॥ मृतानामंतरंज्ञात्वाक्षणात्स्नेहोनिवर्तते ॥ ९८ ॥ आत्मैवह्यात्मनोबंधुरितिविद्यान्मुहुर्मुहुः ॥ जीवन्नपीतिसंचिंत्यमृतानांकःप्रदास्यति ॥ ९९ ॥ एवंजानन्निदंसर्वंस्वहस्तेनैवदीयताम् ॥ अनित्यंजीवितंयस्मात्पश्चात्कोऽपिनदास्यति ॥ १०० ॥

सब अनित्य हैं इसीसे धर्मआचरण करना ॥ ९७ ॥ जहांतक मनुष्य जीता है तहांतक बंधु है व पिता है. मरनेका अंतर जान, क्षणभरमें स्नेह निवृत्त होता है ॥ ९८ ॥ आत्माही आत्माका बंधु है ऐसा बारंवार जानना. जीवतेभी ऐसा है सो मरेबाद कौन देगा ? ॥ ९९ ॥ ऐसे जानता हुवा अपने हाथसे संपूर्ण देना. जीवना तो अनित्य है पीछे कौन देगा ? ॥ १०० ॥

मेरे शरीरको काष्ठमृत्तिकाजैसे पृथ्वीपर डालकर, विमुख हुवे बांधव तौ आयजाय हैं. धर्म मात्र उसके पीछे जाता है॥१॥ संपदा तो गृहसेही निवृत्त होती है, स्मशानभूमिसे सर्व बांधव निवृत्त होते हैं. शुभ वा अशुभ किये हुए कर्म जाते हुयेके पीछे जाते हैं ॥ २ ॥ जिस शरीरसे कर्म करता है वो शरीर तौ अग्निसे जल जाता है. किया कर्म संग रहता है, पुण्य वा पाप कियाहुवा मनुष्य सब जगा भोगता है ॥३॥ दुःखके सागर संसारमें कोईका कोई बंधु नहीं है. कर्मोंके संबंधसे आते हैं, कर्म क्षीण होनेसे पीछे जाते हैं ॥४॥ माता,

मृतंशरीरमुत्सृज्यकाष्ठलोष्टसमंक्षितौ ॥ विमुखाबांधवायांतिधर्मस्तमनुगच्छति ॥ १ ॥ गृहादर्थानिवर्तंतेश्मशानात्सर्वबांधवाः ॥
शुभाशुभंकृतंकर्मगच्छंतमनुगच्छति ॥ २ ॥ शरीरंवह्निनादग्धंकृतंकर्ममहास्थितम् ॥ पुण्यंवायदिवापापंभुंक्तेसर्वत्रमानवः ॥ ३ ॥
नकोऽपिकस्यचिद्बंधुःसंसारेदुःखसागरे ॥ जायतेकर्मसंबंधायातिकर्मक्षयेपुनः ॥ ४ ॥ मातृपितृसुतभ्रातृबंधुदारादिसंगमः ॥ प्रपा
यामिवजंतूनांनद्यांकाष्ठौघवच्चलः ॥५॥ कस्यपुत्राश्चपौत्राश्चकस्यभार्याधनंचवा ॥ संसारेनास्तिकःकस्यस्वयंतस्मात्प्रदीयताम् ॥ ६॥
आत्मायत्तंधनंयावत्तावद्विप्रेसमर्पयेत् ॥ पराधीनेधनेजातेनकिंचिद्वक्तुमुत्सहेत् ॥ ७ ॥ पूर्वजन्मकृताद्दानादत्रलब्धंधनंबहु ॥ तस्मा
देवंपरिज्ञायधर्मार्थंदीयतांधनम् ॥ ८ ॥

पिता, पुत्र, भाई, बंधु, स्त्री इन्होंका संगम जैसे जीवोंको चौरस्ताकी प्रपापर होता है तैसे होता है. जैसे नदीमें तृणसमूह चलते हैं तैसे है ॥ ५ ॥ किसका पुत्र है और पोता है ? किस की स्त्री है और धन है ? संसारमें कोई किसीका नहीं तिसीसे आपही देना ॥ ६ ॥ जहांतक अपने स्वाधीन धन रहता है तहांतक ब्राह्मणको देना; क्योंकि जब धन पराधीन हुवा तब कुछ बोल नहीं सक्ता है ॥ ७ ॥ पूर्वजन्ममें किये दानसे यहां बहुतसा धन प्राप्त हुवा है ऐसा विचार कर, धर्मके लिये धन खर्च कर देना ॥ ८ ॥

धर्मसे अर्थ होता है, धर्मसे काम होता है. धर्मसे मोक्ष होता है. तिसीसे धर्मआचरण करना॥९॥ जैसे श्रद्धासे धर्माचरण होता है तैसे बहुत धनके समूहसे नहीं होता है. क्योंकि निष्किंचन मुनि श्रद्धासे स्वर्गमें गये हैं॥१०॥ पत्र, पुष्प, फल, जल, जो मेरेलिये भक्तिसे अर्पण करै है वह मैं भक्तिसे अर्पण कियेहुयको प्रसन्नतासे भक्षण करता हूं॥११॥ तिसीसे अवश्य विधिसे दान देना. थोड़ा अथवा बहुत परंतु गिनती नहीं करनी॥१२॥ वो धर्मात्मा पुत्र देवताओंसेभी पूजित होता है जो अंतरसमयमें पृथ्वीपर स्थितहुवे पिताको दान देता है॥१३॥

धर्मात्संजायतेऽर्थश्च धर्मात्कामोऽभिजायते ॥ धर्मएवापवर्गायतस्माद्धर्मंसमाचरेत् ॥ ९ ॥ श्रद्धयाधार्यतेधर्मोबहुभिर्नार्थराशिभिः ॥ निष्किंचनाहिमुनयःश्रद्धावंतोदिवंगतः ॥ १० ॥ पत्रंपुष्पंफलंतोयंयोमेभक्त्याप्रयच्छति ॥ तदहंभक्त्युपहृतमश्नामिप्रियमात्मनः ॥ ११ ॥ तस्मादवश्यंदातव्यंतदादानंविधानतः ॥ अल्पंवाबहुवेतीमांगणनांनैवकारयेत् ॥ १२ ॥ धर्मात्माचसपुत्रोवैदैवतैरपिपूज्यते ॥ दापयेद्यस्तुदानानिपितरंह्यातुरंभुवि ॥१३॥ पित्रोर्निमित्तंयद्वित्तंपुत्रैःपात्रेसमर्पितम् ॥ आत्मापिपावितस्तेनपुत्रपौत्रप्रपौत्रकैः ॥ १४ ॥ पितुःशतगुणंपुण्यंसहस्रंमातुरेवच ॥ भगिन्यांदशसाहस्रंसोदरेदत्तमक्षयम् ॥ १५ ॥ नचैवोपद्रवादातुर्नवानरकयातनाः ॥ मृत्युकालेनचभयंयमदूतसमुद्भवम् ॥ १६ ॥

पिताके निमित्त पुत्र जो धन सुपात्रमें देता है उससे पुत्रका पोता प्रपोतावोंसहित आत्मा पवित्र होता है॥१४॥ पिताको दिया पुण्य सौगुना होता है; माताको दिया हजारगुना होता है; बहिनीको दिया दान दशहजार गुना होता है और सोदरका दिया अक्षय होता है॥ १५ ॥ देनेवालेके नहीं तो अंतमें उपद्रव होते हैं, नहीं नरक दुःख होता है और मृत्युसमयमें यमदूतोंका भय भी नहीं होता है ॥ १६ ॥

जो लोभसे अंतसमयमें नहीं देते हैं, हे गरुड ! वे कदर्य पापी मरे पीछे बहुत शोच करते हैं ॥१७॥ पुत्र, पोता, भाई, स्वगोत्री और मित्र, जो अंतसमयमें दान नहीं देते हैं वे ब्रह्महत्यारे हैं इसमें संशय नहीं ॥ ११८ ॥ इ० ग० सा० टी० आतुरदाननिरूपणो नाम अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ ॥ अब गरुडजी कहते हैं—हे प्रभो ! आपने आतुर समयका दान तौ यथार्थ कहा, अब मररहे पुरुषोंके जो कृत्य हैं वे कहो ॥ १ ॥ श्रीभगवान् कहते हैं—हे गरुड ! सुनो, देहत्यागकी विधि कहताहूं. जिस

यदिलोभान्नयच्छंतिकालेह्यातुरसंज्ञके ॥ मृताःशोचंतितेसर्वेकदर्याःपापिनःखग ॥ १७ ॥ पुत्राःपौत्राःसहभ्रात्रासगोत्राःसुहृदस्तुये ॥ ददंतिनातुरेदानंब्रह्मघ्नास्तेनसंशयः ॥ ११८ ॥ इति श्रीगरुडपुराणेसारोद्धारे आतुरदाननिरूपणंनाम अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ ॥

॥ गरुडउवाच ॥ कथितंभवतांसम्यग्दानमातुरकालिकम् ॥ म्रियमाणस्ययत्कृत्यंतदिदानींवदप्रभो ॥ १ ॥ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ शृणुतार्क्ष्यप्रवक्ष्यामिदेहत्यागस्यतद्विधिम् ॥ मृतायेनविधानेनसद्गतिंयांतिमानवाः ॥ २ ॥ कर्मयोगाद्यदादेहीमुंचत्यत्रनिजंवपुः ॥ तुलसीसन्निधौकुर्यान्मंडलंगोमयेनतु ॥ ३ ॥ तिलांश्चैवविकीर्याथदर्भांश्चैवविनिःक्षिपेत् ॥ स्थापयेदासनेशुभ्रेशालग्रामशिलांतदा ॥ ४ ॥ शालग्रामशिलायत्रपापदोषभयापहा ॥ तत्सन्निधानमरणान्मुक्तिर्जंतोःसुनिश्चिता ॥ ५ ॥

विधिसे मरेभये मनुष्य श्रेष्ठ गतिको प्राप्त होतेहैं ॥ २ ॥ कर्मयोगसे जड जीव अपना शरीर जब त्यागता है तब तुलसीके समीप गोबरसे मंडल करना ॥ ३ ॥ वा तिल विथराके दर्भ स्थापित करना, उसपर सुंदर आसन विछाकर, शालग्राम शिलारूपी भगवान्को स्थापित करना ॥ ४ ॥ क्योंकि जहां पाप दोष भयका नाश करनेवाली शालग्रामकी शिला होय उसके नजीक मरनेसे जीवकी मुक्ति निश्चय होती है ॥ ५ ॥

तुलसीके वृक्षकी छाया जिसके घरमें होय उसके नजीक मरनेसे दानसे कभी नहीं होनेवाली मुक्ति होतीहै ॥ ६ ॥ तुलसीके विटपका स्थान जिसके घरमें स्थित होय वो घर तीर्थरूप है. उसमें यमके दूत नहीं आते हैं ॥ ७ ॥ तुलसीकी मंजरीसहित जो प्राणोंको त्यागैहै वो सैकडों पापोंसे संयुक्त होय तौभी यमराज उसको देखनेको समर्थ नहीं है ॥ ८ ॥ तुलसीका दल मुखमें धर, तिल दर्भके आसनपर जो मरता है तौ पुत्रहीनभी वो पुरुष विष्णुपुरमें जाताहै ॥ ९ ॥ तीन प्रकारके पवित्र तिल, दर्भ, व तुलसी ये

तुलसीविटपच्छायायत्रास्तिभवतापहा ॥ तत्रैवमरणान्मुक्तिःसर्वदादानदुर्लभा ॥ ६ ॥ तुलसीविटपस्थानंगृहेयस्यावतिष्ठते ॥ तद्गृहं तीर्थरूपंहिनयांतियमकिंकराः ॥ ७ ॥ तुलसीमंजरीयुक्तोयस्तुप्राणान्विमुंचति ॥ यमस्तंनेक्षितुंशक्तोयुक्तंपापशतैरपि ॥ ८ ॥ त स्यादलंमुखेकृत्वातिलदर्भासनेमृतः ॥ नरोविष्णुपुरंयातिपुत्रहीनोऽप्यसंशयः ॥ ९ ॥ तिलाःपवित्रास्त्रिविधादर्भाश्चतुलसीरपि ॥ नरंनिवारयंत्येतेदुर्गतिंयांतमातुरम् ॥ १० ॥ ममस्वेदसमुद्भूतायतस्तेपावनास्तिलाः ॥ असुरादानवादैत्याविद्रवंतितिलैस्ततः ॥ ११ ॥ दर्भाविभूतिर्मेताक्ष्र्यममरोमसमुद्भवाः ॥ अतस्तत्स्पर्शनादेवस्वर्गंगच्छंतिमानवाः ॥ १२ ॥ कुशमूलेस्थितोब्रह्माकुशमध्येजनार्दनः ॥ कुशाग्रेशंकरोदेवस्त्रयोदेवाःकुशेस्थिताः ॥ १३ ॥

अंतमें दुर्गतिको जातेहुए पुरुषको निवारण करते हैं ॥ १० ॥ मेरे पसीन्हसे प्रगट हुये तिल हैं इसीसे तिल पवित्र हैं. असुर, दानव, दैत्य ये तिलोंसे भागतेहैं ॥ ११ ॥ हे गरुड ! दर्भ हमारी विभूति है, व मेरे रोमोंसे प्रगट हुए हैं इसीसे दर्भोंके स्पर्शसे मनुष्य स्वर्गमें जातेहैं ॥ १२ ॥ दर्भोंके मूलमें ब्रह्मा रहते हैं; दर्भोंके मध्यमें भगवान विष्णु (मैं) रहतेहैं; और दर्भोंके अगाडी महादेव रहतेहैं. ऐसे तीनों देवता कुशोंमें स्थित हैं ॥ १३ ॥

इसीसे दर्भ, अग्नि, मंत्र, तुलसी, ब्राह्मण और गौ ये वार वार कर्ममें उपयोग किये भयेभी निर्माल्य अर्थात् अयोग्यताको नहीं प्राप्त होते हैं ॥१४॥ दर्भ तो पिंडोंपर निर्माल्य होते हैं. ब्राह्मण प्रेतभोजनमें निर्माल्य अर्थात् अयोग्य होते हैं. मंत्र, गौ तुलसी ये नीचके घरमें अयोग्य होते हैं. चितामें अग्नि अयोग्य होता है ॥ १५ ॥ गोबरसे लिपीहुई व दर्भ बिछीहुई पृथिवीपर आतुरको रख देना, अंतरिक्षमें नहीं ॥ १६ ॥ ब्रह्मा, विष्णु, महादेव, सब देवता, व अग्नि ये मंडल अर्थात् लीपीहुंई पृथ्वीपर स्थित रहते हैं तिसीसे

अतःकुशावह्निमंत्रतुलसीविप्रधेनवः ॥ नैतेनिर्माल्यतांयांतिक्रियमाणाःपुनःपुनः ॥१४॥ दर्भाःपिंडेषुनिर्माल्याब्राह्मणाःप्रेतभोजने ॥
मंत्रागौस्तुलसीनीचेचितायांचहुताशनः ॥१५॥ गोमयेनोपलिप्तेतुदर्भास्तरणसंस्कृते ॥ भूतलेह्यातुरंकुर्यादंतरिक्षंविवर्जयेत् ॥ १६ ॥
ब्रह्माविष्णुश्चरुद्रश्चसर्वेदेवाहुताशनः ॥ मंडलोपरितिष्ठंतितस्मात्कुर्वीतमंडलम् ॥ १७ ॥ सर्वत्रवसुधापूतालेपोयत्रनविद्यते ॥ यत्रले
पःकृतस्तत्रपुनर्लेपेनशुद्ध्यति ॥ १८ ॥ राक्षसाश्चपिशाचाश्चभूताःप्रेतायमानुगाः ॥ अलिप्तदेशेखट्वायामंतरिक्षेविशंतिच ॥ १९ ॥
अतोऽग्निहोत्रंश्राद्धंचब्रह्मभोज्यंसुरार्चनम् ॥ मंडलेनविनाभूम्यामातुरंनैवकारयेत् ॥ २० ॥ लिप्तभूम्यामतःकृत्वास्वर्णंरत्नंमुखेक्षिपेत् ॥
विष्णोःपादोदकंदद्याच्छालग्रामस्वरूपिणः ॥ २१ ॥

लीपी पृथ्वी करनी ॥ १७॥ जहां २ आगल लेप नहीं हुवा वह संपूर्ण पृथ्वी पवित्र ही है. जहां पहले लीपी गई वहां फेर लेपसेही पवित्र होती है ॥ १८ ॥ राक्षस, पिशाच भूत, प्रेत, यमके दूत ये बिगर लीपे स्थानमें और खाट अंतरिक्षमें प्रवेश होते हैं ॥ १९ ॥ इसीसे अग्निहोत्र, श्राद्ध, ब्राह्मणभोजन, देवताओंकी पूजा ये और मरनेवालेको मंडलविना पृथ्वीपर नहीं करना ॥ २० ॥ इसीसे लीपीभई पृथ्वीपर करके, सुवर्ण और रत्न मुखमें देना. शालग्रामस्वरूपी विष्णुका चरणामृत देना ॥ २१ ॥

शालग्रामशिलाका जल जो बिंदुमात्र पीता है वो सब पापोंसे छूटके, वैकुंठस्थानमें जाता है ॥ २२ ॥ पीछे महापापोंके नाश करनेवाला गंगाजल देना. वो गंगाजल पीनेसे संपूर्ण तीर्थोंमें स्नान दान करनेका पुण्य होता है॥ २३॥ जो शरीर शुद्ध करनेवाला हजार चांद्रायण व्रत करते हैं और जो अंतमें गंगाजल पीतेहैं-वे दोनों बराबर शुद्ध होते हैं ॥ २४ ॥ जैसे हे गरुड! अग्नि पाय रुईकी राशि नाश होती है तैसे गंगाजल पीनेसे पाप भस्म होते हैं ॥२५॥ जो सूर्यके किरणसे तपाहुवा गंगाजल पीता है

शालग्रामशिलातोयंयःपिबेद्बिंदुमात्रकम् ॥ ससर्वपापनिर्मुक्तोवैकुंठभुवनंव्रजेत् ॥ २२ ॥ ततोगंगाजलंदद्यान्महापातकनाशनम् ॥ सर्वतीर्थकृतस्नानदानपुण्यफलप्रदम् ॥ २३॥ चांद्रायणंचरेद्यस्तुसहस्रंकायशोधनम् ॥ पिबेद्यश्चैवगंगांभःसमौस्यातामुभावपि ॥२४॥ अग्निंप्राप्ययथाताक्ष्यर्तूलराशिर्विनश्यति ॥ तथागंगांबुपानेनपातकंभस्मसाद्भवेत् ॥ २५॥ यस्तुसूर्यांशुसंतप्तंगांगंयःसलिलंपिबेत् ॥ ससर्वयोनिनिर्मुक्तःप्रयातिसदनंहरेः ॥२६॥ नद्योजलावगाहेनपावयंतीतराञ्जनान् ॥ दर्शनात्स्पर्शनात्पानात्तथागंगेतिकीर्तनात् ॥ ॥ २७ ॥ पुनात्यपुण्यान्पुरुषाञ्छतशोऽथसहस्रशः ॥ गंगातस्मात्पिबेत्तस्याजलंसंसारतारकम् ॥ २८ ॥ गंगागंगेतियोब्रूयात्प्राणैःकंठगतैरपि ॥ मृतोविष्णुपुरंयातिनपुनर्जायतेभुवि ॥ २९ ॥

वो संपूर्ण योनियोंसे छूट, हरिके स्थानमें जाता हैं ॥ २६ ॥ अन्य नदियां जलमें स्नान करनेसे पवित्र करती हैं. गंगा तो देखनेसे, स्पर्श करनेसे, पीनेसे, 'गंगा' ऐसे नाम लेनेसे पवित्र करती है ॥ २७ ॥ श्रीगंगा सैकड़ों हजारों पापी पुरुषोंको पवित्र करती है-तिसीसे संसारसे तिरानेवालेने गंगाजल पीलेना ॥ २८ ॥ 'गंगा गंगा' ऐसे जो प्राण कंठमें गयेभी बोलता है वो मरा हुवा विष्णुपुरमें जाता है. फिर पृथ्वीपर नहीं जन्मता है ॥ २९ ॥

प्राण निकलते समय जो पुरुष श्रद्धासे मनसेभी गंगाका स्मरण करताहै वो परमगतिको प्राप्त होताहै ॥ ३० ॥ इसीसे गंगाका ध्यान करना, नमस्कार करना, स्मरण करना, जल पीना उसके पीछे मोक्ष देनेवाला कुछ भागवत सुनना ॥ ३१ ॥ भागवतका एक श्लोक अथवा आधा श्लोक या पादभी जो अंतमें पढ़ै या सुनै उसका ब्रह्मलोकसे कभी पीछा आना नहीं होताहै ॥ ३२ ॥ वेद उपनिषद्का पाठ करनेसे, शिव वा विष्णुकी स्तुति करनेसे, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य इन्होंको मरना मुक्ति देनेवाला है ॥ ३३ ॥ प्राण जानेके समय हे गरुड़ ! अनशन करना अर्थात् अन्न जल त्यागना. पीछे ब्राह्मण विरक्त हो तो उसे आतुरसंन्यास देना ॥ ३४ ॥

उत्क्रामद्भिश्चयःप्राणैःपुरुषःश्रद्धयान्वितः॥ चिंतयेन्मनसागंगांसोपियातिपरांगतिम्॥३०॥अतोध्यायेन्नमेद्गंगांसंस्मरेत्तज्जलंपिबेत्॥ ततोभागवतंकिंचिच्छृणुयान्मोक्षदायकम्॥ ३१॥ श्लोकंश्लोकार्धपादंवायोंऽतेभागवतंपठेत्॥ नतस्यपुनरावृत्तिर्ब्रह्मलोकात्कदाचन ॥ ३२ ॥ वेदोपनिषदांपाठाच्छिवविष्णुस्तवादपि ॥ ब्राह्मणक्षत्रियविशांमरणंमुक्तिदायकम् ॥ ३३ ॥ प्राणप्रयाणसमयेकुर्यादनशनंखग ॥ दद्यादातुरसंन्यासंविरक्तस्यद्विजन्मनः ॥ ३४ ॥ संन्यस्तमितियोब्रूयात्प्राणैःकंठगतैरपि ॥ मृतोविष्णुपुरंयातिनपुनर्जायतेभुवि ॥ ३५ ॥ एवंजातविधानस्यधार्मिकस्यतदाखग ॥ ऊर्ध्वच्छिद्रेणगच्छंतिप्राणास्तस्यसुखेनहि ॥ ३६ ॥ मुखंचचक्षुषीनासेकर्णौद्वाराणिसप्तच ॥ एभ्यःसुकृतिनोयांतियोगिनस्तालुरंध्रतः ॥ ३७ ॥

जो आतुर प्राण कंठमें आनेपरभी म संन्यासी हूँ ऐसा बोलता है वो मराहुवा विष्णुपुरमें जाता है. फिर वह पृथ्वीपर नहीं जन्मता है ॥ ३५ ॥ हे गरुड़ ! ऐसे हुवा है विधान जिसका ऐसे धर्मात्माके प्राण ऊर्ध्वछिद्रोंसे सुखसे निकलतेहैं ॥३६॥ मुख १, नेत्र २, नासिका २, कर्ण २ ये सात ऊपरके द्वार हैं. इन्होंसे सुकृतियोंके प्राण जातेहैं. योगिराजोंके प्राण तलुवासे जाते हैं ॥ ३७ ॥

अपानवायुसे मिला भया प्राणवायु जब अपानसे जुदा होताहै तब प्राणवायु सूक्ष्म होकर, शरीरसे बाहिर निकलता है ॥ ३८॥ प्राणवायु निकले पीछे शरीर पडताहै. जैसे पवनसे उखड़ा हुआ निराधार वृक्ष पडे तेसे ॥ ३९ ॥ प्राणोंसे रहित, चेष्टा विना शरीर निंदित होताहै. व दुर्गंधसे सबको निंदित अस्पृश्य होताहै ॥ ४० ॥ शरीरकी कीड़ा, विष्ठा, भस्म ऐसे तीन अवस्था अंतमें होतीहैं सो ऐसे क्षणमें नाश होनेवाले शरीरसे मनुष्य क्या गर्व करतेहैं ? ॥ ४१ ॥ ऐसे जब पृथ्वी पृथ्वीमें लीन होतीहै, जलमें जल लीन होताहै, तेजमें तेज लीन होताहै, वायु वायुमें लीन होताहै ॥ ४२ ॥ और आकाशमें आकाश लीन होताहै ऐसे सर्वव्यापी

अपानान्मिलितप्राणौयदाहिभवतःपृथक् ॥ सूक्ष्मीभूत्वातदावायुर्विनिष्क्रामतिपुत्तलात् ॥ ३८ ॥ शरीरंपततेपश्चान्निर्गतेमरुतीश्वरे ॥ कालाहतंपतत्येवंनिराधारोयथाद्रुमः ॥ ३९ ॥ निर्विचेष्टंशरीरंतुप्राणैर्मुक्तंजुगुप्सितम् ॥ अस्पृश्यंजायतेसद्योदुर्गंधंसर्वनिंदितम् ॥ ४० ॥ त्रिधावस्थाशरीरस्यकृमिविड्भस्मरूपतः ॥ किंगर्वःक्रियतेदेहेक्षणविध्वंसिभिर्नरैः ॥ ४१ ॥ पृथिव्यांलीयतेपृथ्वी आपश्चैवतथाऽप्सुच ॥ तेजस्तेजसिलीयेतसमीरस्तुसमीरणे ॥ ४२ ॥ आकाशश्चतथाकाशेसर्वव्यापीचशंकरः ॥ नित्यमुक्तोजगत्साक्षीआत्मादेहेष्वजोऽमरः ॥ ४३ ॥ सर्वेंद्रिययुतोजीवःशब्दादिविषयैर्वृतः ॥ कामरागादिभिर्युक्तःकर्मकोशसमन्वितः ॥ ४४ ॥ पुण्यवासनयायुक्तोनिर्मितेस्वेनकर्मणा ॥ सप्रविश्यनवेदेहेगृहेदग्धेयथागृही ॥ ४५ ॥

शंकर नित्यमुक्त जगत्साक्षी आत्मा देहमें अजर और अमर है ॥ ४३ ॥ तहां सर्व इंद्रियोंसे युक्त जीव शब्द, स्पर्श, रूप, रस, व गंध, इन विषयोंसे युक्त कामरागादिकोंसे युक्त कर्मोंके कोशसंयुक्त ॥ ४४ ॥ पुण्यवासनासहित ऐसा जीव अपने कर्मोंसे रचेहुए नवीन शरीरमें प्रवेश होता है, जैसे घर जलगये बाद गृहस्थी दूसरे घरमें प्रवेश होय ॥ ४५ ॥

उसीसमय किंकिणीजालमाली ऐसा शोभित चमरसहित विमान लेकर, देवपार्षद आते हैं ॥ ४६ ॥ धर्मके तत्त्वको जाननेवाले, बुद्धिवान्, धर्मात्माके सदा वल्लभ ऐसे देवदूत इस धर्मात्माको सत्कारसे सवार कराकर, विमानसे स्वर्गमें ले जाते हैं ॥ ४८ ॥ सुंदर दिव्य है देह जिनकी, स्वच्छ हैं वस्त्र, आभूषण और माला. सुवर्णसे रत्नोंसे जडित आभूषणोंसे संयुक्त ऐसे दानके प्रभावसे महान् है प्रभाव जिसका ऐसा धर्मात्मा देवतोंसे पूजाभया स्वर्गमें जाता है ॥ ४८ ॥ इति श्रीसारोद्धारगरुडपुराणस्य ज्ञानबोधिनी भाषाटीकायां म्रियमाणकृत्यनिरूपणं नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ ॥ गरुडजी कहते हैं–हे विभो! अब सुकृती पुरुषोंके देहको दाह करनेकी विधि कहो. जो

तदाविमानमादायकिंकिणीजालमालियत् ॥ आयांतिदेवदूताश्चलसच्चामरशोभिताः ॥ ४६ ॥ धर्मतत्वविदःप्राज्ञाःसदाधार्मिकवल्लभाः ॥ तदैनंकृतकृत्यंस्वर्विमानेननयंतिते ॥ ४७ ॥ सुदिव्यदेहोविरजांबरस्रक्सुवर्णरत्नाभरणैरुपेतः ॥ दानप्रभावात्समहानुभावःप्राप्नोतिनाकंसुरपूज्यमानः ॥४८॥ इतिश्रीगरुडपुराणेसारोद्धारेम्रियमाणकृत्यनिरूपणंनामनवमोऽध्यायः ॥९॥ ॥ गरुडउवाच ॥ देहदाहविधानंचवदसुकृतिनांविभो ॥ सतीयदिभवेत्पत्नीतस्याश्चमहिमावद ॥ १ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ शृणुतार्क्ष्यप्रवक्ष्यामिसर्वमेवौर्ध्वदैहिकम् ॥ यत्कृत्वापुत्रपौत्राश्चमुच्यंतेपैतृकादृणात् ॥ २ ॥ किंदत्तैर्बहुभिर्दानैःपित्रोरंत्येष्टिमाचरेत् ॥ तेनाग्निष्टोमसदृशंपुत्रःफलमवाप्नुयात् ॥ ३ ॥ तदाशोकंपरित्यज्यकारयेन्मुंडनंसुतः ॥ समस्तबांधवैर्युक्तःसर्वपापापनुत्तये ॥ ४ ॥

सती होय तो उसकी महिमा कहो ॥ १ ॥ अब भगवान् कहते हैं—हे गरुड! संपूर्ण पारलौकिक क्रिया कहताहूं सो सुनो. जिस क्रियाके करनेसे पुत्र पोता पित्रीश्वरोंके ऋणसे छूटते हैं ॥ २ ॥ बहुत दानके देनेसे क्या है? मातापिताके दाहसे आदिले अंतकृत्य करना. तिससे अग्निष्टोमजैसा फल पुत्रको प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ तब शोकको त्याग कर, संपूर्ण बांधवोंसहित मुंडन करावे. जिससे पुत्रके सर्व पाप नाश होते हैं ॥ ४ ॥

मातापिताके मरणमें जो पुत्रने मुंडन नहीं किया उसको संसारसमुद्रसे तिरनेवाला पुत्र कैसा जानना ? ॥ ५ ॥ इसीसे अवश्य मुंडन करना. नख और कांखमें मुंडन वर्जित करना. पीछे बांधवोंसहित स्नानकर, धोयेहुये वस्त्र पहिरने ॥६॥ उसी समयके लाये हुवे जलसे उस मुर्दाको स्नान कराना तथा चंदन और पुष्पोंकी मालासे संयुक्त करना अथवा मृत्तिकासे संयुक्त करना॥७॥नवीन वस्त्रसे आच्छादित कर, नाम गोत्र उच्चारकर, अपसव्यसे संकल्प कराय, दक्षिण हाथसे पिंड देना॥८॥ मृत्युस्थानमें देहको शव

मातापित्रोर्मृतौयेनकारितंमुंडनंनहि ॥ आत्मजःसकथंज्ञेयःसंसारार्णवतारकः ॥ ५ ॥ अतोमुंडनमावश्यंनखकक्षाविवर्जितम् ॥
ततःसबांधवःस्नात्वाधौतवस्त्राणिधारयेत् ॥ ६ ॥ सद्योजलंसमानीयततस्तंस्नापयेच्छवम् ॥ मंडयेच्चंदनैःस्रग्भिर्गंगामृत्तिकयाऽथवा
॥ ७ ॥ नवीनवस्त्रैःसंच्छाद्यतदापिंडंसदक्षिणम् ॥ नामगोत्रंसमुच्चार्यसंकल्पेनापसव्यतः ॥ ८ ॥ मृत्युस्थानेशवोनामतस्यनाम्ना
प्रदापयेत् ॥ तेनभूमिर्भवेत्तुष्टातदधिष्ठातृदेवता ॥ ९ ॥ द्वारदेशेभवेत्पांथस्तस्यनाम्नाप्रदापयेत् ॥ तेननैवोपघातायभूतकोटिषुदुर्गताः
॥ १० ॥ ततःप्रदक्षिणांकृत्वापूजनीयाःस्नुषादिभिः ॥ स्कंधःपुत्रेणदातव्यस्तदाऽन्यैर्बांधवैःसह ॥ ११ ॥ धृत्वास्कंधेस्वपितरंयःश्मशा
नायगच्छति ॥ सोऽश्वमेधफलंपुत्रोलभतेचपदेपदे ॥ १२ ॥

नाम है इसीसे शव नामसे पिंड देना. उस पिंडके देनेसे उसकी पृथ्वी अधिष्ठात्री देवता प्रसन्न होतीहै ॥९॥ द्वारपर पांथसंज्ञा होतीहै सो उस पांथनामसे दरवाजेपर पिंड देना. उस पिंडसे भूतकोटिमें जो दुर्गतिवाले हैं वे उपघात नहीं करते ॥ १० ॥ पीछे प्रदक्षिणा करके, पुत्र बंधुआदिकोंसे पूजन योग्य है. उसी समयमें और बाधवोंसहित पुत्र स्कंध अर्थात् पिता कंधेपर धरके लेजावे ॥११॥ जो पुत्र अपने कंधेपर पिताको धारण कर, स्मशानभूमिमें लेजाताहै वो पुत्र पदपदमें अश्वमेध यज्ञके फलको प्राप्त होता है ॥ १२ ॥

सदा पितासे ललित होताहै सो कंधा, पीठ, गोदी, इन्होंमें धारण कर, उस वक्तही उस ऋणसे छूटता है, जब मरेहुवे अपने पिताको स्कंधसे ले चलता है ॥१३॥पीछे अर्द्ध-स्मशानमार्गमें पृथ्वीको बहार, जलसे छिड़क, विश्राम करना. स्नान कराय, भूतसंज्ञक उसको भूतनामसे पिंड देना ॥ १४ ॥ पिशाच, राक्षस, यक्ष तथा जो औरभी दिशाओंमें स्थित हैं वे सब हवन करनेलायक शरीरके अयोग्यत्वकारक नहीं होते हैं ॥ १५ ॥ पीछे स्मशानभूमिमें लेजाय उत्तरमें मुखकर, स्थापित करना. तहां देहदाह करनेके वास्ते पृथ्वीशोधन करना ॥ १६ ॥ बहार कर, पृथ्वीमें गोबरसे वेदी लीपकर, उस वेदीपर दर्भोंसे उर्ध्वरेखा कर, रेखामध्यें अनामिका और अंगूठासे उद्धार कर,

नीत्वास्कंधेस्वपृष्ठेंऽकेसदातातेनलालितः ॥ तदैवतद्दणान्मुच्येन्मृतंस्वपितरंवहेत् ॥ १३ ॥ ततोऽर्धमार्गेविश्रामंसंमार्ज्याभ्युक्ष्यकारयेत् ॥
संस्नाप्यभूतसंज्ञायतस्मैतेनप्रदापयेत् ॥१४॥ पिशाचाराक्षसायक्षायेचान्येदिक्षुसंस्थिताः ॥ तस्यहोतव्यदेहस्यनैवायोग्यत्वकारकाः
॥ १५ ॥ ततोनीत्वाश्मशानेषुस्थापयेदुत्तरामुखम् ॥ तत्रदेहस्यदाहार्थंस्थलंसंशोधयेद्यथा ॥ १६ ॥ संमार्ज्यभूमिंसंलिप्योल्लिख्यो
द्धृत्यचवेदिकाम् ॥ अभ्युक्ष्योपसमाधायवह्निंतत्रविधानतः ॥ १७ ॥ पुष्पाक्षतैरथाभ्यर्च्यदेवंक्रव्यादसंज्ञकम् ॥ लोमभ्यस्त्वनुवाकेन
होमंकुर्याद्यथाविधि ॥ १८ ॥ त्वंभूतभृज्जगद्योनिस्त्वंभूतपरिपालकः ॥ मृतःसांसारिकस्तस्मादेनंत्वंस्वर्गतिंनय ॥ १९ ॥ इतिसंप्रार्थ
यित्वाऽग्निंचितातत्रैवकारयेत् ॥ श्रीखंडतुलसीकाष्ठैःपलाशाश्वत्थदारुभिः ॥ २० ॥

जलसे प्रोक्षण कर, नजीक बैठ, तहां विधिसे अग्नि स्थापित करना ॥ १७ ॥ पीछे क्रव्यादसंज्ञक अग्निदेवताको पुष्प अक्षतोंसे पूजकर "लोमभ्यःस्वाहा, त्वग्भ्यःस्वाहा, मांसेभ्यःस्वाहा" इत्यादिक अनुवाकोंसे वेदमंत्रोंसे विधिपूर्वक होम करना ॥ १८ ॥ हे क्रव्याददेव ! तुम भूतोंको धारण करतेहो, जगत्के कारण हो, भूतोंके पालन करनेवाले हो, इसीसे मरेहुवे इस संसारीको स्वर्गमें प्राप्त करो ॥१९॥ ऐसे अग्निदेवकी प्रार्थना कर, तहां चंदन, तुलसी, पलाश, पिप्पल इन वृक्षोंके काष्ठसे चिता करनी ॥२०॥

चितापर उस प्रेतको बैठाकर, दो पिंड तहां देने. हे गरुड ! चितामें मुर्दाके हाथमें प्रेत नामसे पिंड देने. इसी चितासे ले सपिंडी कर्मपर्यंत प्रेतपना होता है ॥ २१ ॥ प्रेतकल्पके जाननेवाले कोई उसको साधक कहते हैं सो चितामें साधक नामसे वा प्रेतनामसे देना ॥ २२ ॥ ऐसे पांच पिंडोंसे शवकी आहुतियोग्यता होती है; नहीं तो पूर्व कहे उपघात करते हैं ॥ २३ ॥ जो पंचक नहीं हो तो ऐसे प्रेतको पांच पिंड देकर, पीछे पुत्र तृणोंसे अग्नि लेकर, तहां देवे; ॥ २४ ॥ जो पंचकमें मरता है

चितामारोप्यतंप्रेतंपिंडौद्वौतत्रदापयेत् ॥ चितायांशवहस्तेचप्रेतनाम्नाखगेश्वर ॥ चितामोक्षप्रभृतिकंप्रेतत्वमुपजायते ॥ २१ ॥ के पितंसाधकंप्राहुः प्रेतकल्पविदोजनाः ॥ चितायांतेननाम्नावाप्रेतनाम्नाऽथवाकरे॥२२॥इत्येवंपंचभिःपिंडैःशवस्याहुतियोग्यता॥अन्य-थाचोपघातायपूर्वोक्तास्तेभवंतिहि ॥ २३ ॥ प्रेतोदत्त्वापंचपिंडान्हूतमादायतंतृणैः ॥ अग्निंपुत्रस्तदादद्यान्नभवेत्पंचकंयदि ॥ २४ ॥ पंचकेप्रमृतोयस्तुनगतिंलभतेनरः ॥ दाहस्तत्रनकर्तव्यःकृतेऽन्यमरणंभवेत् ॥२५॥ आदौकृत्वाधनिष्ठार्धमेतन्नक्षत्रपंचकम् ॥ रेवत्यंतं नदाहेऽर्हंदाहेचनशुभंभवेत् ॥२६॥ गृहेहानिर्भवेत्तस्यऋक्षेष्वेषुमृतोहियः ॥ पुत्राणांगोत्रिणांचापिकश्चिद्विघ्नःप्रजायते ॥२७॥ अथवा ऋक्षमध्येहिदाहःस्याद्विधिपूर्वकः ॥ तद्विधिंतेप्रवक्ष्यामिसर्वदोषप्रशांतये २८ ॥

वो मनुष्य गतिको नहीं प्राप्त होता है इसीसे दाह नहीं करना. करेसे दूसरा मरता है ॥ २५ ॥ पहले धनिष्ठार्धको ले रेवतीतक ये पांच नक्षत्र दाह करनेके योग्य नहीं हैं इन्होंमें दाह करनेसे शुभ नहीं होता है ॥ २६ ॥ जो इन नक्षत्रोंमें मरता है उसका दाह करनेसे घरमें हानि होती है. पुत्रोंको वा गोत्रवालोंको कोई विघ्न होता है ॥२७॥ जो पंचकोंमें दाह करना हो तो विधिसे करना. वह विधि तुमको संपूर्ण दोषकी शांतिके वास्ते कहताहूं ॥ २८ ॥

हे गरुड ! शवके नजीक नक्षत्रके मंत्रोंसे मंत्रितभये दर्भोंके चार पुत्तला इथापित करना ॥ २९ ॥ तहां सुवर्णका दान देना नक्षत्रोंके नामसे होम करना. मध्यमें "प्रेताजयता" इस मंत्रसे होम करना. फेर नक्षत्रोंके नामसे होम करना. ऐसे संपुटी होम करना ॥ ३० ॥ पीछे उन चारों पुत्तलोंसहित शवका दाह करना. पुत्र सपिंडीके दिन उसकी शांतिविधि करै ॥ ३१ ॥ तिलोंका पात्र सुवर्ण रौप्य रत्न घृतसे भराहुवा कांशांका पात्र ये दान दोषकी शांतिके वास्ते देना ॥ ३२ ॥ ऐसे पंच-

शवस्यनिकटेतार्क्ष्यनिक्षिपेत्पुत्तलांस्तदा ॥ दर्भमयांश्चचतुरऋक्षमंत्राभिमंत्रितान् ॥ २९ ॥ तत्रहेमप्रकर्तव्यंवहंतिऋक्षनामभिः ॥ प्रेताजयतमंत्रेणपुनर्होमस्तुसंपुटैः ॥ ३० ॥ ततोदाहःप्रकर्तव्यस्तैश्चपुत्तलकैःसह ॥ सपिंडनदिनेकुर्यात्तस्यशांतिविधिंसुतः ॥ ॥ ३१ ॥ तिलपात्रंहिरण्यंचरूप्यंरत्नंयथाक्रमम् ॥ घृतपूर्णंकांस्यपात्रंदद्याद्दोषप्रशांतये ॥ ३२ ॥ एवंशांतिविधानंतुकृत्वादाहंकरोतियः ॥ नतस्य विघ्नोजायेतप्रेतोयातिपरांगतिम् ॥ ३३ ॥ एवंपंचकदाहःस्यात्तद्विनाकेवलंदहेत् ॥ सतीयदिभवेत्पत्नीतयासहविनिर्दहेत् ॥ ३४ ॥ पतिव्रतायदानारीभर्तुःप्रियहितेरता ॥ इच्छेत्सहैवगमनंतदास्नानंसमाचरेत् ॥ ३५॥ कुंकुमाञ्जनसद्वस्त्रभूषणैर्भूषितातनुम् ॥ दानंदद्याद्द्विजातिभ्योबंधुवर्गेभ्यएवच ॥ ३६ ॥

कशांतिविधान करके, जो दाह करताहै उसको विघ्न नहीं होते हैं प्रेत परमगतिको प्राप्त होता है. ॥ ३३ ॥ ऐसे पंचकोंमें दाह होता है. पंचक नहीं हो तो केवल शवका दाह करना. जो कदाचित् उसकी स्त्री सती हो तो उसके साथही दग्ध करना ॥ ३४ ॥ जो पतिव्रता स्त्री भर्तारके प्रिय और हितमें आसक्त हो वह पतिके संग जानेकी इच्छा करै तो स्नान करना ॥ ३५ ॥ केशर, कुंकुम, अंजन, श्रेष्ठ वस्त्र, आभूषण इन्होंसे शरीरको शोभित करना. ब्राह्मणोंको और कुटुंबको दान देना ॥ ३६ ॥

गुरुको नमस्कार करके, तदा घरसे बाहिर निकलना. तहांसे देवस्थानमें जाकर, भक्तिसे हरिको नमस्कार करना ॥ ३७ ॥ तहां आभूषण अर्पण कर, श्रीफल देकर, लज्जा, और मोह त्यागके, स्मशानभूमिमें जाना ॥ ३८ ॥ पीछे वहां सूर्यनारायणको नमस्कार करके, चिताकी परिक्रमा कर, पुष्पशय्याजैसे मान, चितामें स्थित हो. अपनी गोदीमें पतिको स्थापित करना ॥ ३९ ॥ अपनी सखियोंको श्रीफल देकर, पीछे दाह करनेकी आज्ञा लेनी. जैसे गंगास्नान हो ऐसा मान शरीर दग्ध करना ॥ ४० ॥ गर्भणी

गुरुंनमस्कृभ्यतदानिर्गच्छेन्मंदिराद्वहिः ॥ ततोदेवालयंगत्वाभक्त्यातंप्रणमेद्धरिम् ॥ ३७ ॥ समर्प्याभरणंतत्रश्रीफलंपरिगृह्यच ॥ लज्जांमोहंपरित्यज्यश्मशानभवनंव्रजेत् ॥३८॥ तत्रसूर्यंनमस्कृत्यपरिक्रम्यचितांतदा ॥ पुष्पशय्यांतदारोहेन्निजांकेस्वापयेत्पतिम् ॥३९॥ सखिभ्यःश्रीफलंदत्वादाहमाज्ञापयेत्ततः ॥ गंगास्नानसमंज्ञात्वाशरीरंपरिदाहयेत् ॥ ४० ॥ नदहेद्गर्भिणीनारीशरीरंपतिनासह ॥ जनयित्वाप्रसूतिंचबालंपोष्यसतीभवेत् ॥४१॥ नारीभर्तारमासाद्यशरीरंदहतेयदि ॥ अग्निर्दहतिगात्राणिनैवात्मानंप्रपीडयेत् ॥४२॥ दह्यतेध्मायमानानांधातूनांचयथामलः ॥ तथानारीदहेत्पापंहुताशेह्यमृतोपमे ॥ ४३ ॥ दिव्यादौसत्ययुक्तश्चशुद्धीधर्मयुतोनरः ॥ यथानदह्यतेतप्तलोहपिंडेनकर्हिचित् ॥ ४४ ॥

स्त्री हो तो वह पतिसंग शरीर दग्ध नहीं करै. बालक प्रगट कर, पालन करके, सती होना ॥ ४१ ॥ स्त्री भर्तारके साथ जो शरीर दग्ध करती है उसका अंग अग्नि जलाती है. उसके आत्माको पीड़ा नहीं देती है ॥ ४२ ॥ जैसे धमीहुई अग्नि धातुके मैलको दग्ध करती है तैसे स्त्री अमृततुल्य अग्निमें पाप दग्ध करती है ॥ ४३ ॥ विवाद, शपथादिकोंमें जैसे सत्यवक्ता शुद्ध धर्मात्मा तपेहुवे लोहाके पिंडसे कभी नहीं दग्ध होता है ॥ ४४ ॥

तैसे वहभी पतिसंयुक्त कभी दग्ध नहीं होतीहै. अंतरात्माकरके मराहुवा भर्तारके एकत्र स्वरूप प्राप्त होती है अर्थात् फेर नारीशरीर नहीं प्राप्त होती है ॥ ४५ ॥ जहांतक स्त्री मरेहुए पतिसंग अपने शरीरको दग्ध नहीं करती है तहांतक वह स्त्री स्त्रीशरीरसे नहीं छूटती है ॥ ४६ ॥ तिसीसे संपूर्ण यत्नसे अपने पतिकी सदा सेवा करना. कर्मोंसे, मनसे, वाणीसे मरेहुवे वा जीवते पतिकी आज्ञानुसार होना ॥ ४७ ॥ पतिके मरे बाद जो स्त्री अग्निमें प्रवेश करै वह इंद्राणीके तुल्य हुई स्वर्गमें प्रकाशती है

तथासापतिसंयुक्तादह्यतेनकदाचन ॥ अंतरात्मात्मनाभर्तुर्मृतेनैकत्वमागतः ॥ ४५ ॥ यावच्चाग्नौमृतेपत्यौस्त्रीनात्मानं प्रदाहयेत् ॥ तावन्नमुच्यतेसाहिस्त्रीशरीरात्कथंचन ॥ ४६ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेनस्वपतिंसेवयेत्सदा ॥ कर्मणामनसावाचामृतेजीवतितद्गता ॥ ४७ ॥ मृतेभर्तरियानारीसमारोहेद्धुताशनम् ॥ साऽरुंधतीसमाभूत्वास्वर्गलोकेमहीयते ॥ ४८ ॥ तत्रसाभर्तृपरमास्तूयमानाप्सरोगणैः ॥ रमतेपतिनासार्धंयावदिंद्राश्चतुर्दश ॥ ४९ ॥ मातृकंपैतृकंचैवयत्रसाचप्रदीयते ॥ कुलत्रयंपुनात्यत्रभर्तारंयाऽनुगच्छति ॥ ५० ॥ तिस्रःकोट्योऽर्धकोटीचयानिरोमाणिमानुषे ॥ तावत्कालंवसेत्स्वर्गे पतिनासहमोदते ॥ ५१ ॥

॥ ४८ ॥ वह स्वर्गमें पतिके प्रिय हुई अप्सरोंके समूहसे स्तुतिको प्राप्त हुई पतिके संग जहांतक चौदह इंद्र हों तहांतक रमती है ॥ ४९ ॥ जो स्त्री पतिके संग जलती है वह माताके कुलको, पिताके कुलको, और जहां उसको दीजाती है उसके कुलको ऐसे तीन कुलोंको पवित्र करती है ॥ ५० ॥ मनुष्यशरीरमें साढ़े तीन करोड़ रोम हैं, उतनेही वर्षपर्यंत स्वर्गलोकमें वह स्त्री वास करती है. और पतिके संग आनंद भोगती है ॥ ५१ ॥

सूर्यजैसे प्रकाशमान विमानमें अपने प्यारके संग रमतीहै. जहांतक सूर्य चंद्रमा रहें तहांतक पतिके लोकमें वास करतीहै ॥५२॥ फिर चिरायु होकर निर्मल कुलमें जन्मती है. जो स्त्री पतिव्रता हो तौ वह उसी पतिको प्राप्त होती है ॥ ५३ ॥ जो स्त्री क्षणमात्र दाह होनेके दुःखसे ऐसे सुखको त्यागती है वह मूर्खा जन्मपर्यंत पतिके विरहकी अग्निसे दग्ध होती है ॥ ५४ ॥ तिसीसे पतिको शिवरूप जानके, उसके संग शरीर दग्ध करना. हे गरुड ! सती न हो तो तिसको इसप्रकार दग्ध करना ५५ ॥ आधा दग्ध

विमानेसूर्यसंकाशेक्रीडतेरमणेनसा ॥ यावदादित्यचंद्रौचभर्तृलोकेचिरंवसेत् ॥ ५२ ॥ पुनश्चिरायुःसाभूत्वाजायतेविमलेकुले ॥
पतिव्रतातुयानारीतमेवलभतेपतिम् ॥ ५३ ॥ याक्षणंदाहदुःखेनसुखमेताद्दशंत्यजेत् ॥ सामूढाजन्मपर्यंतंदह्यतेविरहाग्निना ॥ ५४ ॥
तस्मात्पतिंशिवंज्ञात्वासहतेनदहेत्तनुम् ॥ यदिनस्यात्सतीतार्क्ष्यतमेवंप्रदहेत्तदा ॥ ५५ ॥ अर्धेदग्धेऽथवापूर्णेस्फोटयेत्तस्यमस्तकम् ॥
गृहस्थानांतुकाष्ठेनयतीनांश्रीफलेनच ॥ ५६ ॥ प्राप्तयेपितृलोकानांभित्वातद्ब्रह्मरंध्रकम् ॥ आज्याहुतिंततोदद्यान्मंत्रेणानेनतत्सुतः
॥ ५७ ॥ अस्मात्त्वमधिजातोऽसित्वदयंजायतांपुनः ॥ असौस्वर्गायलोकायस्वाहाज्वलतुपावकः ॥ ५८ ॥ एवमाज्याहुतिंदत्त्वाति
लमिश्रांसमंत्रकाम् ॥ रोदितव्यंततोगाढंतेनतस्यसुखंभवेत् ॥ ५९ ॥

हुवा वा पूरा दग्ध हुवा उसका मस्तक फोड़ना सो मस्तक गृहस्थोंका तो काष्ठसे और यतियोंका श्रीफलसे फोडना ॥५६॥ उसके पुत्रने पितृलोककी प्राप्तिके लिये उसका ब्रह्मरंध्र भेदनकर, उसमें घृतकी आहुति इस मंत्रसे देनी ॥ ५७ ॥ हे पावक ! तुम श्रीभगवान्से प्रगटे हो सो तुम्हारे सकाशसे यह मनुष्य स्वर्गलोकमें जावे ॥ ५८ ॥ ऐसे तिलोंसे मिली हुई मंत्र सहित घृतकी आहुति देकर, गाढ़ रोदन करना. उससे प्राणिको सुख होताहै ॥ ५९ ॥

दाहक्रियाके बाद स्त्रियोंने स्नान करना, पुत्रोंकरके नाम गोत्रको लेकर, तिलोदक देना ॥ ६० ॥ नीमके पत्ताका भक्षण करना, मरेहुवेके गुण कहने; पीछे श्मशानमेंसे सब लोग स्त्रियोंको अगाडी करके घरमें जाना ॥ ६१ ॥ फेर घरमें स्नान करके गोग्रास देना, पत्रावलीमें भोजन करना, घरका रांधा हुआ अन्न नहीं खाना ॥ ६२ ॥ मृतकका स्थान लिपकर, दक्षिणको मुख करे, बारा दिनपर्यंत रातदिन दीपक करना ॥ ६३ ॥ हे गरुड! सूर्य अस्तहुवेपर स्मशानमें वा चौरस्तामें, मृत्तिकामय पात्रमें तीन दिन दूध

दाहादनंतरंकार्यंस्त्रीभिःस्नानंततःसुतैः ॥ तिलोदकंततोदद्यान्नामगोत्रोपकल्पितम् ॥६०॥ प्राशयेन्निंबपत्राणिमृतकस्यगुणान्वदेत् ॥ स्त्रीजनोऽग्रेगृहंगच्छेत्पृष्ठतोनरसंचयः ॥ ६१ ॥ गृहेस्नानंपुनःकृत्वागोग्रासंचप्रदापयेत् ॥ पत्रावल्यांचभुंजीयाद्गृहान्नंनैवभक्षयेत् ॥ ६२ ॥ मृतकस्थानमालिप्यदक्षिणाभिमुखंततः ॥ द्वादशाहकपर्यंतंदीपंकुर्यादहर्निशम् ॥ ६३ ॥ सूर्येऽस्तमागतेतार्क्ष्यस्मशानेवा चतुष्पथे ॥ दुग्धंचमृण्मयेपात्रेतोयंदद्याद्दिनत्रयम् ॥ ६४ ॥ अपक्वमृण्मयंपात्रंक्षीरनीरप्रपूरितम् ॥ काष्ठत्रयंगुणैर्बद्धंधृत्वामंत्रंपठे दिमम् ॥ ६५ ॥ श्मशानानलदग्धोऽसिपरित्यक्तोऽसिबांधवैः ॥ इदंनीरमिदंक्षीरमत्रस्नाहिइदंपिब ॥ ६६ ॥ चतुर्थेसंचयःकार्यःसा ग्निकैश्चनिरग्निकैः ॥ तृतीयेऽह्निद्वितीयेवाकर्तव्यश्चाविरोधतः ॥ ६७ ॥

जल देना ॥ ६४ ॥ कच्ची मृत्तिकाके पात्रमें दूध, व जल भरकर, जेवडीसे बांधे हुये तीन काष्ठपर धरकर, ये मंत्र पढ़ना ॥ ६५ ॥ स्मशानमें अग्निसे दग्ध हो, बांधवोंसे त्यागे भये हो सो यह जल और यह दूध है, सो इस जलमें स्नान करो और दूध पीवो ॥ ६६ ॥ चौथेदिन साग्निक (ब्याहा हुआ) अस्थिसंचय करना. और निरग्निक लोगोंने तीसरे दिन वा दूसरे दिनभी करना. पंचक शनिवारादिकोंको वर्जना ॥ ६७ ॥

स्मशानभूमिमें जाकर, स्नान करके, पवित्र होना. ऊन वस्त्र पहरकर, पवित्री धारण करना, ॥ ६८ ॥ पुत्र स्मशानवासियोंको उड़दकी वालि देवै. " यमायत्वा " इस मंत्रसे तीन परिक्रमा करना ॥ ६९ ॥ हे गरुड़! पीछे दूधसे चितास्थानमें प्रोक्षण कर, जलसे फेर छिड़कना. पीछे हाड़ोंका समूह ग्रहण करना ॥ ७० ॥ उन हाड़ोंको पलाशके पत्तोंमें डाल, दूध जलसे धोने. पीछे मृत्तिकाके पात्रमें स्थापित कर, विधिसे श्राद्ध करना ॥ ७१ ॥ त्रिकोण स्थंडिल करके, गौवरसे लिपकर

गत्वाश्मशानभूमिंचस्नानंकृत्वाशुचिर्भवेत् ॥ ऊर्णासूत्रंवेष्टयित्वापवित्रींपरिधायच ॥६८॥ दद्यात्श्मशानवासिभ्यस्ततोमाषबलिं
सुतः ॥ यमायत्वेतिमंत्रेणतिस्रःकुर्यात्परिक्रमाः ॥ ६९॥ ततोदुग्धेनसंभ्युक्ष्यचितास्नानंखगेश्वर ॥ जलेनसेचयेत्पश्चाद्दुद्धरेदस्थि
वृंदकम् ॥ ७० ॥ कृत्वापलाशपत्रेषुक्षालयेद्दुग्धवारिभिः ॥ संस्थाप्यमृण्मयेपात्रेश्राद्धंकुर्याद्यथाविधि ॥ ७१ ॥ त्रिकोणंस्थंडिलंकृ
त्वागोमयेनोपलेपितम् ॥ दक्षिणाभिमुखोदिक्षुदद्यात्पिंडत्रयंत्रिषु ॥७२॥ पुंजीकृत्याचिताभस्मतत्रधृत्वात्रिपादुकाम् ॥ स्थापयेत्त
त्रसजलमनाच्छाद्यमुखंघटम् ॥ ७३ ॥ ततस्तंडुलपाकेनदधिघृतसमन्वितम् ॥ बलिंप्रेतायसजलंदद्यान्मिष्टंयथाविधि ॥ ७४ ॥
पदानिदशपंचैवचोत्तरस्यांदिशिव्रजेत् ॥ गर्तंविधायतत्रास्थिपात्रंसंस्थापयेत्खग ॥ ७५ ॥

उसपर दक्षिणको मुख कर, तीनों दिशाओंमें तीन पिंड देने ॥ ७२ ॥ पीछे चिताकी भस्म इकट्ठी कर, उसपर तिपाई धरके, तिपाईपर जलसे भरा विगर ढका घट रखना ॥ ७३ ॥ पीछे चांवल रांध कर, दही घृत मिलाकर, प्रेतको जलसहित विधिसे मीठा बलि देना ॥ ७४ ॥ पीछे पंद्रहपद उत्तरदिशामें जाना. वहां खड्डा खोदकर हे गरुड़! हड्डीके पात्रको स्थापित करना ॥ ७५ ॥

पीछे उसके ऊपर दाहकी आर्ति नाश करनेवाला पिंड देना. पीछे खड्डेसे काढ़कर, उस पात्रको जलके सरोवरमें लेजाय ॥७६॥ तहां दूध व जलसे हाड़ वारंवार धोने. चंदन केंशरसे चर्चित करने ॥७७॥ फेंर संपुटमें धरले, उन्होंको हृदय और मस्तकपर कर, परिक्रमा दे, नमस्कार कर, श्रीगंगाजीके मध्यमें स्थापित करने ॥७८॥ दशदिनके भीतर जिसका हाड़ गंगाजलमें डालाजाता है उसको ब्रह्मलोकसे फेर कभी पीछा आना नहीं होताहै ॥ ७९ ॥ जहांतक मनुष्यके हाड़ गंगाजलमें स्थित रहतेहैं उतने हजारवर्ष

तस्योपरिततोदद्यात्पिंडंदाहार्तिनाशनम् ॥ गर्ताद्दुद्धृत्यतत्पात्रंनीत्वागच्छेज्जलाशयम् ॥ ७६ ॥ तत्रप्रक्षालयेद्दुग्धजलादस्थिपुनः पुनः ॥ चर्चयेच्चंदनेनाथकुंकुमेनविशेषतः ॥ ७७ ॥ धृत्वासंपुटकेतानिकृत्वाचहृदिमस्तके ॥ परिक्रम्यनमस्कृत्यगंगामध्येविनिक्षिपेत् ॥ ७८ ॥ अंतर्दशाहंयस्यास्थिगंगातोयेनिमज्जति ॥ नतस्यपुनरावृत्तिर्ब्रह्मलोकात्कदाचन ॥ ७९ ॥ यावदस्थिमनुष्यस्य गंगातोयेषुतिष्ठति ॥ तावद्वर्षसहस्राणिस्वर्गलोकेमहीयते ॥ ८० ॥ गंगाजलोर्मिसंस्पृश्यमृतकंपवनोयदा ॥ स्पृशतेपातकंतस्यसद्यएव विनश्यति ॥ ८१ ॥ आराध्यतपसोग्रेणगंगादेवींभगीरथः ॥ उद्धारार्थंपूर्वजानामानयद्ब्रह्मलोकतः ॥ ८२ ॥ त्रिषुलोकेषुविख्यातागंगं गायाःपावनंयशः ॥ यापुत्रान्सगरस्यैतान्भस्माख्याननयद्दिवम् ॥ ८३ ॥

स्वर्गलोकमें वास करताहै ॥ ८० ॥ गंगाजलकी तरंगका स्पर्श करके जो पवन मरेहुवेका स्पर्श करै तौ उसके पाप तत्काल नाश होते हैं ॥ ८१ ॥ महान् तपस्यासे राजा भगीरथ श्रीगंगाको आराधन करके, पित्रीश्वरोंके उद्धार करनेके वास्ते ब्रह्मलोकसे लाये ॥ ८२ ॥ सो श्रीगंगाका पवित्र यश त्रिलोकीमें विख्यात है. जो गंगा भस्म भये हुए सगरके पुत्रोंको स्वर्गमें प्राप्त करती भई ॥ ८३ ॥

पूर्वअवस्थामें पाप करके, जो मरतेहैं वेभी गंगामें हाड डालनेसे स्वर्गमें जाते हैं ॥ ८४ ॥ महान् वनमें सब प्राणियोंका हिंसक कोई व्याध सिंहसे माराहुवा नरकमें जाताथा ॥ ८५ ॥ तिसीसमय एक कागने उसका हाड़ लेकर, गंगाजीमें पटका; हाड़के डालनेसे वह व्याध दिव्य विमानमें बैठकर, स्वर्गमें जाता भया ॥ ८६ ॥ इसीसे सुपुत्र आपही अपने पिताकी अस्थि गंगाजीमें डाले. अस्थिसंचयके अगाड़ी दश गात्र करना ॥ ८७ ॥ इसके आगल कोई विदेशमें वा वनमें अथवा चोरभयसे मरता है.

पूर्वेवयसिपापानियेकृत्वामानवामृताः ॥ गंगायामस्थिपतनात्स्वर्गलोकंप्रयांतिते ॥८४॥ कश्चिद्व्याधोमहारण्येसर्वप्राणिविहिंसकः॥
सिंहेननिहतोयावत्प्रयातिनरकालये ॥ ८५ ॥ तावत्कालेनतस्यास्थिगंगायांपातितंतदा ॥ दिव्यंविमानमारुह्यसगतोदेवमंदिरम्
॥ ८६ ॥ अतःस्वमेवसत्पुत्रोगंगायामस्थिपातयेत् ॥ अस्थिसंचयनादूर्ध्वंदशगात्रंसमाचरेत् ॥ ८७ ॥ अथकश्चिद्विदेशेवावनेचौरभ
येमृतः ॥ नलब्धस्तस्यदेहश्चेच्छृणुयाद्यद्दिनेतदा ॥ ८८ ॥ दर्भपुत्तलकंकृत्वापूर्ववत्केवलंदहेत् ॥ तस्यभस्मसमादायगंगातोयेविनि
क्षिपेत् ॥ ८९ ॥ दशगात्रादिकंकर्मतद्दिनादेवकारयेत् ॥ सएवदिवसोग्राह्यःश्राद्धेसांवत्सरादिके ॥ ९० ॥ पूर्णेगर्भेमृतानारीविदार्य
जठरंतदा ॥ बालंनिष्कास्यनिक्षिप्यभूमौतामेवदाहयेत् ॥ ९१ ॥

जिसका शरीर नहीं मिलता तब जिसदिन सुनता है ॥ ८८ ॥ उसीदिन दर्भोंका पुतला करके, पहले कहीहुई रीतिसे केवल दग्ध करना और उसका भस्म लेकर, गंगाजीमें डालना ॥ ८९ ॥ दशगात्रादिक कर्म उसीदिनसे करने और वही दिवस श्राद्धमें ग्रहण करना ॥९०॥ जो पूर्ण गर्भ हुई स्त्री मरजाय तब उसका पेट चीर, बालक निकाल, पृथ्वीमें गाड़के उस स्त्रीको दग्ध करना ॥ ९१ ॥

गंगातीरपर मरेहुवे बालकको गंगामें पटकना और देशमें मरेहुवे बालकको सत्ताईस महीनातक पृथ्वीमें गाडना ॥ ९२ ॥ इसके आगल उसको दग्ध करना. गंगाजीमें हाड डालना, जलका कलश देना, बालकोंको भोजन कराना ॥ ९३ ॥ गर्भनाश हुवेकी क्रिया नहीं है. मरेहुवे बालकको दूध देना. जलघट और क्षीरभोजन बालकोंको देना ॥ ९४ ॥ पंचवर्षकी अवस्थातक बालक मरे तो बालकोंको भोजन कराने. दशवर्षतक पौगंडअवस्थामें व्रतरहित बालक मरे तो पौगंड अवस्थाके बालक भोजन कराने ॥ ९५ ॥ पंचम

गंगातीरेमृतंबालंगंगायामेवपातयेत् ॥ अन्यदेशेक्षिपेद्भूमौसप्तविंशतिमासजम् ॥ ९२ ॥ अतःपरंदहेत्तस्यगंगायामस्थिनिक्षिपेत् ॥ जलकुंभश्चदातव्यंबालानामेवभोजनम् ॥ ९३ ॥ गर्भेनष्टेक्रियानास्तिदुग्धंदेयंमृतेशिशौ ॥ घटंचपायसंभोज्यंदद्याद्बालविपत्तिषु ॥ ९४ ॥ कुमारेचमृतेबालान्कुमारानेवभोजयेत् ॥ सबालान्भोजयेद्विप्रान्पौगंडेसव्रतेमृते ॥ ९५ ॥ मृतश्चपंचमादूर्ध्व मव्रतःसव्रतोऽपिवा ॥ पायसेनगुडेनापिपिंडान्दद्याद्दशक्रमात् ॥ ९६ ॥ एकादशंद्वादशंचवृषोत्सर्गविधिंविना ॥ महादान विहीनंचपौगंडेकृत्यमाचरेत् ॥ ९७ ॥ जीवमानेचपितरिनपौगंडेसपिंडनम् ॥ अतस्तस्यद्वादशाहान्येकोद्दिष्टंसमाचरेत् ॥ ९८ ॥ स्त्रीशूद्राणांविवाहस्तुव्रतस्थानेप्रकीर्तितः ॥ व्रतात्प्राक्सर्ववर्णानांवयस्तुल्याक्रियाभवेत् ॥ ९९ ॥

वर्षसे उपरांत व्रतसहित वा व्रतरहित मरेहुवेको पायसगुडसे क्रमसे दश पिंड देने ॥ ९६ ॥ पौगंड अवस्थामें मरे हुएका एकादश, द्वादश, वृषोत्सर्ग और महादान विना कृत्य करना ॥ ९७ ॥ पिता जीवता हुवा पौगंड अवस्थामें सपिंडीकर्म नहीं करना, इसीसे उसको बारहवें दिवस एकोद्दिष्ट श्राद्ध करना ॥ ९८ ॥ स्त्री और शूद्रोंके व्रतस्थानमें विवाह कहा है. व्रतके पहिले सब वर्णोंके अवस्थातुल्य क्रिया करनी ॥ ९९ ॥

थोड़े कर्मोंके प्रसंगसे थोड़े विषयोंके बंधनमें थोड़ी अवस्थामें थोडीही क्रिया कहीहै ॥ १०० ॥ किशोर और तरुण अवस्थामें शय्यादान वृषोत्सर्गादिक क्रिया करनी. पददान महादान व गोदान भी देने ॥ १ ॥ सब यतियोंका दाह और जलक्रिया नहीं कही है. उन्होंका दशगात्रादिकर्मभी पुत्रोंने नहीं करना ॥ २ ॥ क्योंकि दंड ग्रहण करनेसे मनुष्य नारायणस्वरूप होता है सो तीन दंडोंके ग्रहण करनेसे उन्होंको प्रेतपना नहीं होताहै ॥ ३ ॥ ज्ञानी स्वरूपके अनुभवसे सदा मुक्त रहते हैं;

स्वल्पात्कर्मप्रसंगाच्चस्वल्पाद्विषयबंधनात् ॥ स्वल्पेवयसिदेहेचक्रियांस्वल्पामपीच्छति ॥१००॥ किशोरेतरुणेकुर्याच्छय्यावृषमखादिकम् ॥ पददानंमहादानंगोदानमपिदापयेत् ॥ १ ॥ यतीनांचैवसर्वेषांनदाहोनोदकक्रिया ॥ दशगात्रादिकंतेषांनकर्तव्यंसुतादिभिः ॥ २ ॥ दंडग्रहणमात्रेणनरोनारायणोभवेत् ॥ त्रिदंडग्रहणात्तेषांप्रेतत्वंनैवजायते ॥ ३ ॥ ज्ञानिनस्तुसदामुक्ताःस्वरूपानुभवेनहि॥ अतस्तेतुप्रदत्तानांपिण्डानांनैवकांक्षिणः ॥ ४ ॥ तस्मात्पिंडादिकंतेषांनैवनोदकमाचरेत्॥ तीर्थश्राद्धंगयाश्राद्धंपितृभक्त्यासमाचरेत् ॥५॥ हंसंपरमहंसंचकुटीचकबहूदकौ ॥ एतान्संन्यासिनस्तार्क्ष्यपृथिव्यांस्थापयेन्मृतान् ॥ ६ ॥ गंगादीनामभावेहिपृथिव्यास्थापनंस्मृतम् ॥ यत्रसंतिमहानद्यस्तदातास्वेवनिःक्षिपेत् ॥ १०७ ॥

इसीसे वे ज्ञानी दिये भये पिंडोंकी वांछा नहीं करतेहैं ॥ ४ ॥ तिसीसे उन्होंको पिंडादिक नहीं कहा है व जलांजलि नहीं कही है. तीर्थश्राद्ध, गयाश्राद्ध पितृभक्तिसे आचरण करना ॥ ५ ॥ हंस, परमहंस, कुटीचक, बहूदक इन संन्यासियोंको मरने बाद हे गरुड ! पृथ्वीमें स्थापित करने (गाड़ देना) ॥ ६ ॥ गंगादि महानदियोंके अभावसे पृथ्वीमें गाड़ना कहा है. जहाँ महानदी हों तहाँ उन्होंमें डालै ॥ १०७ ॥

इति श्रीसारोद्धारे गरुड़पुराणे ज्ञानबोधिनीभाषाटीकायां दाहास्थिसंचयनिरूपणं नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ ॥ अब गरुडजी कहतेहैं--हे केशव ! दशगात्रोंकी विधि कही. अब दशगात्र बिधि करनेसे क्या सुकृत होता है ? पुत्र नहीं हुवा तौ कौन करे ? यह हमारेको कहो ॥ १ ॥ यह सुन भगवान कहते हैं--हे गरुड़ ! सुनो तुम्हारेको दशगात्रोंकी विधि कहताहूं, जिनको करके, श्रेष्ठ पुत्र पितृऋणसे छूटता है ॥ २ ॥ पुत्र शोकको त्यागके सात्विकी धीरजता धर पिताके पिंडादिक करने और अश्रुपात नहीं डालने ॥ ३ ॥ कफ, अश्रुपात जो बंधु छोड़ते हैं उनको प्रेत पराधीन हुवा भोगता है. इसीसे उस वक्त रोदन नहीं

इतिश्रीगरुडपुराणेदाहास्थिसंचयकर्मनिरूपणंनामदशमोंऽध्यायः ॥ १० ॥ ॥ गरुडउवाच ॥ दशगात्रविधिंब्रूहिकृतेकिंसुकृतंभवेत् ॥ पुत्राभावेतुकःकुर्यादितिमेवदकेशव ॥ १ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ ॥ शृणुतार्क्ष्यप्रवक्ष्यामिदशगात्रविधिंतव ॥ यद्विधायचसत्पुत्रोमुच्यतेपैतृकादृणात् ॥ २ ॥ पुत्रःशोकंपरित्यज्यधृतिमास्थायसात्विकीम् ॥ पितुःपिंडादिकंकुर्यादश्रुपातंनकारयेत् ॥ ३ ॥ श्लेष्माश्रुबांधवैर्मुक्तंप्रेतोभुंक्तेयतोऽवशः ॥ अतोनरोदितव्यंहितदाशोकान्निरर्थकात् ॥ ४ ॥ यदिवर्षसहस्राणिशोचतेऽहर्निशंनरः ॥ तथापिनैवनिधनंगतोदृश्येतकर्हिचित् ॥ ५ ॥ जातस्यहिध्रुवोमृत्युर्ध्रुवंजन्ममृतस्यच ॥ तस्मादपरिहार्येर्थेनशोकंकारयेद्बुधः ॥ ६ ॥ नहिकश्चिदुपायोऽस्तिदैवोवामानुषोपिवा ॥ योहिमृत्युवशंप्राप्तोजंतुःपुनरिहाव्रजेत् ॥ ७ ॥

करना, कारण शोक निरर्थक है ॥ ४ ॥ जो मनुष्य हजार वर्षपर्यंत रात दिन शोच करै तौभी नाश हुवा प्राणी कभी नहीं दीखता है ॥ ५ ॥ जन्मेहुएकी निश्चय मृत्यु है और मरेहुएका निश्चय जन्म है; तिसीसे विवेकी दूर करनेको अशक्य ऐसे कार्यमें शोक नहीं करै ॥ ६ ॥ ऐसा कोई दैवी वा मानुषी उपाय नहीं है जो मृत्युके वशीभूत हुये जीवको फेर यहां प्राप्त करै ॥ ७ ॥

अवश्यभावी पदार्थोंका जो उपाय होता तौ नल, रामचंद्र, युधिष्ठिर ये दुःखोंसे युक्त नहीं होते ॥ ८ ॥ अत्यंत समागम कोईका किसीके संग नहीं है. अपने शरीरके संगभी नहीं है तो दूसरे कुटुंबादिकोंसे क्या हो ॥९॥ जैसे कोई रस्तेमें जानेवाला मार्गमें छाया देखकर, विश्राम लेता है और विश्राम लेकर, पीछे जाताहै तैसे यह प्राणियोंका संगम है॥१०॥ जो प्रातःकालका बनाया भया अन्न सायंकाल नष्ट होता है उसी रससे पुष्ट भये हुए शरीरमें कौनसी नित्यता है ? ॥११॥ इस दुःखका औषध विचार है सो

अवश्यंभाविभावानांप्रतीकारोभवेद्यदि ॥ तदादुःखैर्नयुज्येरन्नलरामयुधिष्ठिराः ॥ ८ ॥ नायमत्यंतसंवासःकस्यचित्केनचित्सह ॥
अपिस्वस्यशरीरेणकिमुतान्यैःपृथक्जनैः ॥ ९ ॥ यथाहिपथिकःकश्चिच्छायामाश्रित्यविश्रमेत् ॥ विश्राम्यचपुनर्गच्छेत्तद्वद्भूतसमाग
मः ॥ १० ॥ यत्प्रातःसंस्कृतंभोज्यंसायंतच्चविनश्यति ॥ तदन्नरससंपुष्टेकायेकानामनित्यता ॥ ११ ॥ भैषज्यमेतद्दुःखस्यविचारंपरि
चिंत्यच ॥ अज्ञानप्रभवंशोकंत्यक्त्वाकुर्यात्क्रियाःसुतः ॥ १२ ॥ पुत्राभावेवधूःकुर्याद्भार्याभावेचसोदरः ॥ शिष्योवाब्राह्मणस्यैवसपिंडो
वासमाचरेत् ॥ १३ ॥ ज्येष्ठस्यवाकनिष्ठस्यभ्रातुःपुत्रैश्चपौत्रकैः ॥ दशगात्रादिकंकार्यंपुत्रहीनेनरेखग ॥१४॥ भ्रातॄणामेकजातानां
मेकश्चेत्पुत्रवान्भवेत् ॥ सर्वेतेतेनपुत्रेणपुत्रिणोमनुरब्रवीत् ॥ १५ ॥

जानकर, पुत्र अज्ञानसे प्रगट हुवे शोकको त्यागके, क्रिया करे ॥ १२ ॥ पुत्र नहीं हो तो स्त्री क्रिया करे. स्त्री न हो तो छोटाभाई करै. वा ब्राह्मणका शिष्य अथवा सपिंड मनुष्य क्रिया करै ॥ १३ ॥ हे गरुड़ ! बड़े वा छोटे भाईके पुत्र वा पोता पुत्रहीनकी दशगात्रादिक क्रिया करैं ॥१४॥ एक पितासे हुये ऐसे भाइयोंमें जो एक भाई पुत्रवाला हो तो वे सब उस भाईके पुत्रकरके पुत्रवान् होते हैं; यह मनुका वाक्य है ॥ १५ ॥

एक पुरुषकी बहुत स्त्रियोंमें एक जो पुत्रवती हो तो उस एक पुत्रसे वे सब स्त्रियां पुत्रवती होती हैं ॥ १६ ॥ संपूर्ण पुत्रहीनवालोंके मित्र पिंड देवै परंतु क्रियालोप नहीं करे. कोईभी नहीं हो तो पुरोहित करे ॥ १७॥ स्त्री हो अथवा पुरुष हो कोईभी मित्रकी क्रिया करते हैं. अनाथ प्रेतके संस्कार करनेसे उन्होंको करोड़ यज्ञोंका फल होता है ॥ १८॥ हे गरुड ! पिताकी दशगात्रादिक क्रिया पुत्रकरके करनी योग्य है. बडा पुत्रभी मरा हो, अत्यंत स्नेह हो तोभी पिता पुत्रकी क्रिया नहीं करै ॥ १९ ॥ जिसके पुत्र बहुत होंय

पत्न्यश्चबह्वयएकस्यचैकापुत्रवतीभवेत् ॥ सर्वास्ताःपुत्रवत्यःस्युस्तेनैकेनसुतेनहि ॥ १६ ॥ सर्वेषांपुत्रहीनानांमित्रःपिंडंप्रदापयेत् ॥ क्रियालोपोनकर्तव्यःसर्वाभावेपुरोहितः ॥ १७ ॥ स्त्रीवाऽथपुरुषःकश्चिदिष्टस्यकुरुतेक्रियाम् ॥ अनाथप्रेतसंस्कारात्कोटियज्ञफलं लभेत् ॥ १८ ॥ पितुःपुत्रेणकर्तव्यंदशगात्रादिकंखग ॥ मृतेज्येष्ठेऽप्यातिस्नेहान्नकुर्वीतपितासुते ॥१९॥ बहवोऽपियदापुत्राविधिमेकः समाचरेत् ॥ दशगात्रंसपिंडत्वंश्राद्धान्यन्यानिषोडश ॥ २० ॥ एकेनैवतुकार्याणिसंविभक्तधनेष्वपि ॥ विभक्तैस्तुपृथक्कार्यंश्राद्धं सांवत्सरादिकम् ॥ २१ ॥ तस्माज्ज्येष्ठःसुतोभक्त्यादशगात्रंसमाचरेत् ॥ एकभोजीभूमिशायीभूत्वाब्रह्मपरःशुचिः ॥ २२ ॥ सप्तवारं परिक्रम्यधरणींयत्फलंलभेत् ॥ क्रियांकृत्वापितुर्मातुस्तत्फलंलभतेसुतः ॥ २३ ॥ आरभ्यदशगात्रंचयावद्द्वैवार्षिकंभवेत् ॥ तावत्पुत्रःक्रियांकुर्वन्गयाश्राद्धफलंलभेत् ॥ २४ ॥

उसका एक पुत्र विधिसे क्रिया करे. दशगात्र, सपिंडीकर्म, सोलह श्राद्ध ये ॥२०॥ पुत्र न्यारे न्यारे हों तोभी एकसेही करने योग्य हैं. तथा न्यारे हों तो सांवत्सरादिक श्राद्ध जुदे जुदे करने ॥२१॥ तिसीके बड़ा पुत्र भक्तिसे दशगात्र करै. एक वक्त भोजन करे, पृथ्वीपर सोवे, ब्रह्मचारी, पवित्र रहे ॥२२॥ सातवार पृथ्वीकी परिक्रमा करनेसे जो फल मिलता है वो फल पुत्रको मातापिताकी क्रिया करनेसे मिलता है ॥२३॥ दशगात्रसे आरंभ लेकर, जहांतक वर्ष हो वहां तक क्रिया करनेसे गयाश्राद्धके फलको प्राप्त होता है ॥२४॥

कूप, तलाव, आराम, तीर्थ, देवस्थान इनमेंसे कोईभी स्थानमें मध्यान्हसमयमें जाकर, अमंत्रक स्नान करना ॥ २५ ॥ वृक्षके नीचे पवित्र होकर, दक्षिणको मुख कर, स्थित हो, तहां वेदी करनी. उसको गोबरसे लीपनी ॥ २६ ॥ उस वेदीपर पान बिछाय दर्भोंको कौशिक ब्राह्मण स्थापित करना, उसको पाद्य अर्घ्यादिकोंसे पूजकर, " अतसीपुष्पसंकाशं " इस मंत्रसे नमस्कार करना ॥ २७ ॥ उसके अगाड़ी पिंड देनेको आसन देना. उसके ऊपर नामगोत्रसे पिंड देना ॥ २८ ॥ चावलोंका पाक करके

कूपेतडागेवाऽऽरामेतीर्थेदेवालयेऽपिवा ॥ गत्वामध्यमयामेतुस्नानंकुर्यादमंत्रकम् ॥ २५ ॥ शुचिर्भूत्वावृक्षमूलेदक्षिणाभिमुखःस्थितः ॥ कुर्याच्चवेदिकांतत्रगोमयेनोपलिप्यताम् ॥ २६ ॥ तस्यांपर्णेदर्भमयंस्थापयेत्कौशिकंद्विजम् ॥ तंपाद्यादिभिरभ्यर्च्यप्रणमेदतसीति च ॥ २७ ॥ तदग्रेचततोदत्त्वापिंडार्थंकौशमासनम् ॥ तस्योपरिततःपिंडंनामगोत्रोपकल्पितम् ॥ २८ ॥ दद्यात्तंडुलपाकेनयवपिष्टेनवासुतः ॥ उशीरंचंदनंभृंगराजपुष्पंनिवेदयेत् ॥ धूपंदीपंचनैवेद्यंमुखवासंचदक्षिणाम् ॥ २९ ॥ काकान्नंपयसोःपात्रेवर्धमानजलांजलीन् ॥ प्रेतायामुकनाम्नेचमद्दत्तमुपतिष्ठतु ॥ ३० ॥ अन्नंवस्त्रंजलंद्रव्यमन्यद्वादीयतेचयत् ॥ प्रेतशब्देनयद्दत्तंमृतस्यानंत्यदायकम् ॥ ३१ ॥ तस्मादाद्दिनादूर्ध्वंप्राक्सपिंडीविधानतः ॥ योषितःपुरुषस्यापिप्रेतशब्दंसमुच्चरेत् ॥ ३२ ॥

वा जवोंके आटासे देना. उशीर, चंदन, भृंगराजके पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, मुखवास दक्षिणा यह अर्पण करना ॥ २९ ॥ काकबलि, जल, दूधके पात्रोंमें एवर्धमान जलांजली ये अमुकनाम प्रेतको मेरी दीभई प्राप्त होवैं ॥ ३० ॥ अन्न, वस्त्र, जल, द्रव्य और जो कुछ देना सो प्रेतशब्दसे जो दिया है सो मरेहुको अनंत फलदायक है ॥ ३१ ॥ तिसीसें पहले दिनसे लेकर, सपिंडीकर्मतक स्त्री अथवा पुरुषको प्रेतनामसे उच्चारण करना ॥ ३२ ॥

पहिले दिन जिस विधिसे पिंड देवै उसी विधिसे उस अन्नसे नव पिंड देने॥ ३३ ॥ नवमे दिन मृतकको स्वर्गमें जानेके वास्तें सब सपिंडलोगोंके साथ तैलका उंबटना करना ॥ ३४ ॥ बाहिर स्नान करके, दूब, लाज (लाई) लेकर स्त्रियोंको अगाड़ी करके, मरेहुवेके स्थानमें जाना ॥ ३५ ॥ ' दूर्वाकी जैसी तुम्हारे कुलकी वृद्धि हो, लाजसे विकसित हों ' ऐसे कहकर, दूधसहित चावल घरमें डालने ॥ ३६ ॥ हे गरुड़ ! दशवें दिन मांससे पिंड देना. कलियुगमें मांसके

प्रथमेऽहनियात्पिंडोदीयतेविधिपूर्वकम् ॥ तेनैवविधिनाऽन्नेननवपिंडान्प्रदापयेत् ॥ ३३ ॥ नवमेदिवसेचैवसपिंडैःसकलैर्जनैः ॥ तैलाभ्यंगःप्रकर्तव्योमृतकस्वर्गकाम्यया ॥ ३४ ॥ बहिःस्नात्वागृहीत्वाचदूर्वालाजसमन्विताः ॥ अग्रतःप्रमदांकृत्वासमागच्छेन्मृतालयम् ॥ ३५ ॥ दूर्वावंत्कुलवृद्धिस्तेलाजाइवविकासता ॥ एवमुक्त्वात्यजेद्गेहेलाजान्दूर्वासमन्वितान् ॥ ३६ ॥ दशमेऽहनिमांसेन पिंडंदद्यात्खगेश्वर ॥ माषेणतन्निषेधाद्वाकलौनपलपैतृकम् ॥ ३७ ॥ दशमेदिवसेक्षौरंबांधवानांसमुंडनम् ॥ क्रियाकर्तुःसुतस्यापि पुनर्मुंडनमाचरेत् ॥ ३८ ॥ मिष्टान्नैर्भोजयेदेकंदिनेषुदशसुद्विजम् ॥ प्रार्थयेत्प्रेतमुक्तिंचहरिंध्यात्वाकृतांजलिः ॥ ३९ ॥ अतसीपुष्पसंकाशंपीतवाससमच्युतम् ॥ येनमस्यंतिगोविंदंनतेषांविद्यतेभयम् ॥ ४० ॥

निषेधमें उड़दोंके पिंड देना ॥ ३७ ॥ दशवें दिन बांधवोंने मुंडनसहित क्षौर करना. क्रिया करनेवाले पुत्रकाभी फेर मुंडन करना ॥ ३८ ॥ मिष्टान्नसे दश दिनोंमें एक ब्राह्मण जिमाना. हाथ जोड़, हरिको ध्यानकर, प्रेतकी मुक्तिविषे प्रार्थना करना ॥ ३९ ॥ अतसीके पुष्पजैसा घनश्याम स्वरूप, पीतांबर वस्त्र पहिने, अखंडित स्वरूप ऐसे गोविंदको जो नमस्कार करते हैं उनके भय नहीं विद्यमान है ॥ ४० ॥

नहीं है आदि व नाश जिसका ऐसे देव शंख चक्र गदा धारण करे, अक्षय, कमलजैसे नेत्र ऐसे भगवान् प्रेतको मोक्ष देवैं ॥ ४१ ॥ ऐसे प्रार्थनाके मंत्र श्राद्धके अंतमें नित्य पढना. स्नान कर, घरमें जाय, गौग्रास देकर, भोजन करना ॥ ४२॥ इति श्रीगरुडपुराणसारोद्धारस्य ज्ञानबोधिनीभाषाटीकायां दशगात्रविधिनिरूपणं नाम एकादशोऽध्यायः ॥११॥ अब गरुड कहतेहैं कि—हे सुरेश्वर! ग्यारहवें दिनकी विधि हमारेसे कहो. हे जगदीश्वर! वृषोत्सर्गविधानभी मेरेसे कहो ॥ १ ॥ श्रीभगवान् कहते हैं—ग्यारहवें दिन

अनादिनिधनोदेवःशंखचक्रगदाधरः ॥ अक्षय्यःपुंडरीकाक्षप्रेतमोक्षप्रदोभव ॥ ४१ ॥ इतिसंप्रार्थनामंत्रंश्राद्धांतेप्रत्यहंपठेत् ॥ स्नात्वागत्वागृहेदत्त्वागोग्रासंभोजनंचरेत् ॥ ४२ ॥ ॥ इतिश्रीगरुडपुराणेसारोद्धारेदशगात्रविधिनिरूपणंनामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

॥ गरुडउवाच ॥ एकादशदिनस्यापिविधिंब्रूहिसुरेश्वर ॥ वृषोत्सर्गविधानंचवदमेजगदीश्वर ॥ १ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ ॥ एकादशेऽह्निगंतव्यंप्रातरेवजलाशये ॥ और्ध्वदेहिक्रियाःसर्वाःकरणीयाःप्रयत्नतः ॥ २ ॥ निमंत्रयेद्ब्राह्मणांश्ववेदशास्त्रपरायणान् ॥ प्रार्थयेत्प्रेतमुक्तिंचनमस्कृत्यकृतांजलिः ॥ ३ ॥ स्नानसंध्यादिकंकृत्वाह्याचार्योऽपिशुचिर्भवेत् ॥ विधानंविधिवत्कुर्यादेकादशदिनोचितम् ॥ ४ ॥ अमंत्रंकारयेच्छ्राद्धंदशाहंनामगोत्रतः ॥ एकादशेऽह्निप्रेतस्यदद्यात्पिंडंसमंत्रकम् ॥ ५ ॥

प्रातःकाल जलके सरोवरपर जाना. वहां पारलौकिक सब क्रिया करनी ॥ २ ॥ वेदशास्त्रमें परायण ऐसे ब्राह्मणोंको निमंत्रण करना; हाथ जोड़, नमस्कार कर, प्रेतकी मुक्तिके विषे प्रार्थना करना ॥ ३ ॥ स्नान संध्यादिक कर्म करके, आचार्यभी पवित्र होवे और ग्यारहवें दिनके योग्य विधान विधिसे करने ॥ ४ ॥ दशदिनतक तो विना मंत्रके श्राद्ध नामगोत्रसे करने. ग्यारहवें दिन प्रेतको मंत्रसहित पिंड देवे ॥ ५ ॥

सुवर्णके विष्णु करावे, रूपाके ब्रह्मा करावे, तांबाके महादेव करावे, और हे गरुड़ ! लोहेके यम करावे ॥ ६ ॥ पश्चिममें विष्णुको कलश स्थापन करे; उसमें गंगोदक भरे; उस कलशपर पीतांबर पहरेहुए विष्णुको स्थापित करे ॥ ७ ॥ पूर्वमें ब्रह्मकलश क्षीरोदकसहित स्थापित करे तहां श्वेतवस्त्र पहिरेहुए ब्रह्माको स्थापित करे ॥ ८ ॥ उत्तरमें रुद्रकलश शहद घृतसे भरा हुआ स्थापित करे उसपर रक्तवस्त्र पहिरेहुए रुद्रको स्थापित करै ॥ ९ ॥ दक्षिणमें यमघट इंद्रोदकसहित स्थापित करे; काले वस्त्र पहिराय, उस

सौवर्णंकारयेद्विष्णुंब्रह्माणंराैप्यकंतथा ॥ रुद्रस्ताम्रमयःकार्योयमोलोहमयःखग ॥ ६ ॥ पश्चिमेविष्णुकलशंगंगोदकसमन्वितम् ॥
तस्योपरिन्यसेद्विष्णुंपीतवस्त्रेणवेष्टितम् ॥ ७ ॥ पूर्वेतुब्रह्मकलशंक्षीरोदकसमन्वितम् ॥ ब्रह्माणंस्थापयेत्तत्रश्वेतवस्त्रेणवेष्टितम् ॥ ८ ॥
उत्तरस्यांरुद्रकुंभंपूरितंमधुसर्पिषा ॥ श्रीरुद्रंस्थापयेत्तत्ररक्तवस्त्रेणवेष्टितम् ॥ ९ ॥ दक्षिणस्यांयमघटमिंद्रोदकसमन्वितम् ॥ कृष्णवस्त्रे
णसंवेष्ट्यतस्योपरियमंन्यसेत् ॥ १० ॥ मध्येतुमंडलंकृत्वास्थापयेत्कौशिकंसुतः ॥ दक्षिणाभिमुखोभूत्वाऽपसव्येनचतर्पयेत् ॥ ११ ॥
विष्णुंविधिंशिवंधर्मंवेदमंत्रैश्चतर्पयेत् ॥ होमंकृत्वाचरेत्पश्चाच्छ्राद्धंदशघंटादिकम् ॥ १२ ॥ गोदानंचततोदद्यात्पितॄणांतारणायवै ॥
गौरेषाहिमयादत्ताप्रीतयेतेऽस्तुमाधव ॥ १३ ॥

पर यमको स्थापित करे ॥ १० ॥ मध्यमें मंडल करना. उसपर पुत्रने कौशिक ब्राह्मणको स्थापित करना. पीछे दक्षिणाभिमुख हो, अपसव्यसे तर्पण करे ॥ ११ ॥ विष्णु, ब्रह्मा, शिव, धर्म इन्होंको वेदमंत्रोंसे तर्पण करे. होम करके पीछे, दशघटादि श्राद्ध करना ॥ १२ ॥ पीछे गोदान देना, पित्रीश्वरोंको तिरानेके लिये. यह गौ मैंने दी है सो हे माधव ! तुम्हारी प्रसन्नताके अर्थ होवे ॥ १३ ॥

उसका भोगाहुवा जो वस्त्र आभूषण वाहन, घृतसे भरा हुआ कांसाका पात्र, सप्तधान्य ये उसके वांछित ॥ १४ ॥ तिलादि अष्ट महादान जो अंतकालमें नहीं किया हो तो शय्याके समीप धारण कर, उस शय्याका दान देना ॥ १५ ॥ ब्राह्मणके चरण धोकर, वस्त्रादिकोंसे पूजने. उसको सिद्ध किया अन्न देना, मोदक, अपूप, दूध ये देने ॥ १६ ॥ पुत्र तिस समयमें शय्यापर सुवर्णका पुरुष स्थापित करे. पूजा करके विधिसे शय्या देवे ॥ १७ ॥ प्रेतकी मूर्तिसहित सर्वसामग्रीसहित

उपभुक्तंतुतस्यासीद्वस्त्रभूषणवाहनम् ॥ घृतपूर्णंकांस्यपात्रंसप्तधान्यंतदीप्सितम् ॥ १४ ॥ तिलाद्यष्टमहादानमंतकालेनचेत्कृतम् ॥
शय्यासमीपेधृत्वैतद्दानंतस्याःप्रदापयेत् ॥ १५ ॥ प्रक्षाल्यविप्रचरणौपूजयेदंबरादिभिः ॥ सिद्धान्नंतस्यदातव्यंमोदकापूपकाःप
यः ॥ १६ ॥ स्थापयेत्पुरुषंहैमंशय्योपरितदासुतः ॥ पूजयित्वाप्रदातव्यामृतशय्यायथोदिता ॥ १७ ॥ प्रेतस्यप्रतिमायुक्तासर्वोपक
रणैर्वृता ॥ प्रेतशय्यामयाह्येषातुभ्यंविप्रनिवेदिता ॥ १८ ॥ इत्याचार्यायदातव्याब्राह्मणायकुटुंबिने ॥ ततःप्रदक्षिणीकृत्यप्रणिप
त्यविसर्जयेत् ॥ १९ ॥ एवंशय्याप्रदानेनश्राद्धेननवकादिना ॥ वृषोत्सर्गविधानेनप्रेतोयातिपरांगतिम् ॥ २० ॥ एकादशेऽह्नि
विधिनावृषोत्सर्गंसमाचरेत् ॥ हीनांगंरोगिणंबालंत्यक्त्वाकुर्यात्सलक्षणम् ॥ २१ ॥

हे ब्राह्मण ! यह प्रेतशय्या तुमको मैंने अर्पण करी है ॥ १८ ॥ ऐसे आचार्य कुटुंबी ब्राह्मणको देना. पीछे परिक्रमा और नमस्कार करके उसे भेज देवे ॥ १९ ॥ ऐसे शय्या देनेसे, नवकादि श्राद्ध करनेसे व वृषोत्सर्गविधिसे प्रेत परम गतिको प्राप्त होता है ॥ २० ॥ ग्यारहवें दिन विधिसे वृषोत्सर्ग आचरण करे. सो हीन अंग, रोगी, बालक इन्होंको त्यागके, लक्षणोंसहित वृषको छोड़देवे करे ॥ २१ ॥

लालनेत्र और जो पिला हो, शृंग गला और खुरोंमें लाल हो, सपेद उदर हो, काली पीठ हो, ऐसा वृषका उत्सर्ग ब्राह्मणने करना ॥ २२ ॥ जिसका सचिक्कण वर्ण हो और लाल होय वो क्षत्रियको कहा है, पीलेवर्णका बैश्यको कहा है; कृष्णवर्णका शूद्रको कहा है ॥ २३ ॥ जो सब अंगमें पीला होय, पूंछ पदोंमें सपेद होय उसको पिंगवृष कहते हैं वो पित्रीश्वरोंको प्रीति बढ़ाता है ॥ २४ ॥ जिस वृषके चरण, मुख, पूंछ सपेद हैं जो लाखके रसजैसा वर्णका है उसको नीलवृष ऐसा कहते हैं ॥ २५ ॥ जो वर्णसे लोहित है, मुख और पूंछसे सपेद है, खुर और शींगोंसे पीला है उसको रक्तनील कहते हैं ॥ २६ ॥ जो सर्व अंगमें एकसा

रक्ताक्षःपिंगलोयस्तुरक्तःशृंगेगलेखुरे ॥ श्वेतोदरःकृष्णपृष्ठोब्राह्मणस्यविधीयते ॥ २२ ॥ सुस्निग्धवर्णोयोरक्तःक्षत्रियस्यविधीयते ॥
पीतवर्णश्चवैश्यस्यकृष्णःशूद्रस्यशस्यते ॥ २३ ॥ यस्तुसर्वांगपिंगःस्याच्छ्वेतःपुच्छेपदेषुच ॥ सपिंगोवृषइत्याहुःपितॄणांप्रीतिवर्धनः
॥ २४ ॥ चरणास्तुमुखंपुच्छंयस्यश्वेतानिगोपतेः ॥ लाक्षारससवर्णोयःसनीलइतिकीर्तितः ॥ २५ ॥ लोहितोयस्तुवर्णेनमुखेपु
च्छेचपाण्डुरः ॥ पिंगःखुरविषाणाभ्यांरक्तनीलोनिगद्यते ॥ २६ ॥ सर्वांगेष्वेकवर्णोयःपिंगःपुच्छेखुरेषुयः ॥ तंनीलपिंगमित्याहुः
पूर्वजोद्धारकारकम् ॥ २७ ॥ पारावतसवर्णस्तुललाटेतिलकान्वितः ॥ तंबभ्रुनीलमित्याहुःपूर्णंसर्वांगशोभनम् ॥ २८ ॥ नीलः
सर्वशरीरेषुरक्तश्चनयनद्वये ॥ तमप्याहुर्महानीलंनीलःपंचविधःस्मृतः ॥ २९ ॥

वर्ण हो, पूंछ और खुरोंमें पीला हो उसको नीलपिंग कहते हैं. वोभी पित्रीश्वरोंका उद्धार करता है ॥ २७ ॥ कबूतरजैसा वर्णका हो, ललाटमें तिलक हो उसको बभ्रुनील वृष ऐसे कहते हैं; उसको पूर्णअंग और सर्वअंगसे शोभित करके लेना ॥ २८ ॥ जो सब शरीरमें नीला होय, दोनों नेत्रोंमें लाल होय उसकोभी महानील वृष कहते हैं, इस प्रकार नील वृष पांच प्रकारके होते हैं ॥ २९ ॥

ऐसे वृषको अवश्य छोड़ना. वृषको घरमें नहीं रखना. तिसकी इस लोकमें पुरातनी कथा चलती है ॥ ३० ॥ बहुत पुत्रोंकी बांछा करनी; कारण बहुत हों तो कोई एक गयामें जाता है; गौरी अर्थात् अष्ट वर्षकी कन्याको विवाह करता है वा नील वृष छोडता है ॥३१॥ वही पुत्र माना है जो माता पिताके अर्थ वृषोत्सर्ग करता है. और जो गयामें श्राद्ध देता है, और यह नहीं करनेवाला विष्ठासम कहा है ॥ ३२ ॥ रौरवादि नरकोंमें जिसके पित्रीश्वर पचते हैं वे सब एकविंश पीढ़ीतक वृषोत्सर्गसे तिरते हैं ॥ ३३ ॥

अवश्यमेवमोक्तव्योनसधार्योगृहेभवेत् ॥ तदर्थमेपाचरतिलोकेगाथापुरातनी ॥ ३० ॥ इष्टव्याबहवःपुत्रायद्येकोऽपिगयांव्रजेत् ॥ गौरींविवाहयेत्कन्यांनीलंवावृषमुत्सृजेत् ॥ ३१ ॥ सएवपुत्रोमंतव्योवृषोत्सर्गंतुयश्चरेत् ॥ गयायांश्राद्धदाताचयोऽन्योविष्ठासमः किल ॥ ३२ ॥ रौरवादिषुयेकेचित्पच्यंतेयस्यपूर्वजाः ॥ वृषोत्सर्गेणतान्सर्वांस्तारयेदेकविंशतिम् ॥ ३३ ॥ वृषोत्सर्गंकिलेच्छंति पितरःस्वर्गताअपि ॥ अस्मद्वंशेसुतःकोपिवृषोत्सर्गंकरिष्यति ॥ ३४ ॥ तदुत्सर्गाद्वयंसर्वेयास्यामःपरमांगतिम् ॥ सर्वयज्ञेषुचा स्माकंवृषयज्ञोहिमुक्तिदः ॥ ३५ ॥ तस्मात्पितृविमुक्त्यर्थंवृषयज्ञंसमाचरेत् ॥ यथोक्तेनविधानेनकुर्यात्सर्वंप्रयत्नतः ॥ ३६ ॥ ग्रहाणांस्थापनंकृत्वातत्तन्मंत्रैश्चपूजनम् ॥ होमंकुर्याद्यथाशास्त्रंपूजयेद्वृषमातुरः ॥ ३७ ॥

स्वर्गमें गयेहुएभी पित्रीश्वर वृषोत्सर्गकेविषे इच्छा करतेहैं कि—हमारे वंशमें कोई पुत्र वृषोत्सर्ग करेगा ॥ ३४ ॥ उस वृषके त्यागनेसे हम समग्र परमगतिको जावेंगे. सब यज्ञोंमें हमारेको वृषयज्ञ परम मुक्तिदाता है ॥ ३५ ॥ तिसीसे पित्रीश्वरोंकी मुक्तिके लिये यथोक्त विधिसे संपूर्ण यत्नसे वृषयज्ञ आचरण करना ॥ ३६ ॥ ग्रहोंको स्थापन करके, उन उनके मंत्रोंसे पूजन करना. शास्त्रोक्तविधिसे होम करना. पीछे वृषकी पूजा करनी ॥ ३७ ॥

बछरा बछिया लाकर, उनके कंकण बांधना. उस वख्त विवाहविधिसे स्तंभ रोपना ॥ ३८ ॥ वृषका और बछियाका रुद्रकुंभके कलशसे स्नान कराना गंधमालासे पूजन करके, प्रदक्षिणा करनी ॥ ३९ ॥ दक्षिणबाजूमें त्रिशूल, वामबाजूमें चक्र देना. पीछे उसको छोड़के हाथ जोड, पुत्र यह मंत्र पढ़ै ॥ ४० ॥ तुम साक्षात् धर्म हो, वृषरूपसे तुमको पहले ब्रह्माने रचा है. सो तुम्हारे छोड़नेके दानसे पित्रीश्वरोंको भवसागरसे तिरादो ॥ ४१ ॥ ऐसे मंत्रोंसे नमस्कार कर, बछरा बछिया छोड़ना. हे गरुड ! उनको

वत्संवत्सींसमानायबध्नीयात्कंकणंतयोः ॥ वैवाह्येनविधानेनस्तंभमारोपयेत्तदा ॥ ३८ ॥ स्नापयेच्चवृषंवत्सींरुद्रकुंभोदकेनंच ॥ गंधमाल्यैश्चसंपूज्यकारयेच्चप्रदक्षिणाम् ॥ ३९ ॥ त्रिशूलंदक्षिणेपार्श्वेवामेचक्रंप्रदापयेत् ॥ तंविमुच्यांजलिंबध्वापठेन्मंत्रमिमंसुतः ॥ ॥ ४० ॥ धर्मस्त्वंवृषरूपेणब्रह्मणानिर्मितःपुरा ॥ तवोत्सर्गप्रदानेनतारयस्वभवार्णवात् ॥ ४१ ॥ इतिमंत्रान्नमस्कृत्यवत्संवत्सींसमुत्सृजेत् ॥ वरदोऽहंसदातस्यप्रेतमोक्षंददामिच ॥ ४२ ॥ तस्मादेषःप्रकर्तव्यस्तत्फलंजीवतोभवेत् ॥ अपुत्रस्तुस्वयंकृत्वासुखंयाति परांगतिम् ॥ ४३ ॥ कार्तिकादौशुभेमासेचोत्तरायणगेरवौ ॥ शुक्लपक्षेऽथवाकृष्णेद्वादश्यादितिथौतथा ॥ ४४ ॥ ग्रहणद्वितयेचैवपुण्यतीर्थेऽयनद्वये ॥ विषुवत्रितयेचापिवृषोत्सर्गंसमाचरेत् ॥ ४५ ॥

मैं कामना देता हूं और प्रेतको मोक्ष देताहूं ॥४२॥ तिसीसे इस वृषोत्सर्गको करना इसको जीवता करै तौभी उसी फलको प्राप्त होताहै. पुत्र न होतो आपही करनेसे परमगतिको सुखसे जाताहै ॥ ४३ ॥ कार्तिक आदि शुभ महीनेमें, उत्तरायण सूर्यमें, शुक्लपक्ष अथवा कृष्णपक्षमें, द्वादशी आदि तिथियोंमें, ॥ ४४ ॥ दोनों ग्रहणोंमें, पवित्र तीर्थमें, दोनों अयनोंमें, अर्थात् मेष, तुलाकी संक्रांतिके दिनोंमें वृषोत्सर्ग करना ॥ ४५ ॥

शुभ देशमें शुभ लग्न और शुभ मुहूर्तमें सावधान होकर, विधिका ज्ञाता शुभ लक्षणवाले ब्राह्मणको बुलाकर ॥ ४६ ॥ जप होम दानसे देहशुद्धि करै. पहलेके जैसे होमादि सब कृत्य करने ॥ ४७ ॥ शालिग्राम भगवानको स्थापित करके, वैष्णवश्राद्ध करना; पीछे आत्मश्राद्ध करके, ब्राह्मणके अर्थ दान देना ॥ ४८ ॥ ऐसे हे गरुड़ ! जो पुत्रवान् वा अपुत्रवान् करताहै उसको सब कामका फल वृषोत्सर्गसे होताहै ॥४९॥ अग्निहोत्रादि यज्ञोंसे, नाना प्रकारके दानोंसे उस गतिको नहीं प्राप्त होताहै जिस गतिको वृषोत्सर्गसे

शुभलग्नेमुहूर्तेचशुचौदेशेसमाहितः ॥ ब्राह्मणंतुसमाहूयविधिज्ञंशुभलक्षणम् ॥ ४६ ॥ जपैर्होमैस्तथादानैःप्रकुर्याद्देहशोधनम् ॥
पूर्ववत्सकलंकृत्यंकुर्याद्धोमादिलक्षणम् ॥ ४७ ॥ शालग्रामंचसंस्थाप्यवैष्णवंश्राद्धमाचरेत् ॥ आत्मश्राद्धंततःकुर्याद्दद्याद्दानंद्विज
न्मने ॥ ४८ ॥ एवंयःकुरुतेपक्षिन्नपुत्रस्यापिपुत्रवान् ॥ सर्वकामफलंतस्यवृषोत्सर्गात्प्रजायते ॥ ४९ ॥ अग्निहोत्रादिभिर्यज्ञैर्दा
नैश्चविविधैरपि ॥ नतांगतिमवाप्नोतिवृषोत्सर्गेणयांलभेत् ॥ ५० ॥ बाल्येकौमारेपौगंडेयौवनेवार्धकेकृतम् ॥ यत्पापंतद्विनश्ये
त्तवृषोत्सर्गान्नसंशयः ॥ ५१ ॥ मित्रद्रोहीकृतघ्नश्चसुरापोगुरुतल्पगः ॥ ब्रह्महाहेमहारीचवृषोत्सर्गात्प्रमुच्यते ॥ ५२ ॥ तस्मात्स
र्वप्रयत्नेनवृषयज्ञंसमाचरेत् ॥ वृषोत्सर्गसमंपुण्यंनास्तिताक्ष्र्यजगत्त्रये ॥ ५३ ॥

प्राप्त होताहै ॥५०॥ बाल्य अवस्थामें, कौमारमें, पौगंडमें, यौवनमें, बुढ़ापेमें जो पाप किया है वो सब वृषोत्सर्गसे नष्ट होताहै इसमें संदेह नहीं है ॥५१॥ मित्रद्रोही, कृतघ्नी, मदिरा पीनेवाला, गुरुकी शय्याका गामी, ब्राह्मणकी हत्या करनेवाला, सुवर्ण चोरनेवाला ये सब पापी वृषोत्सर्गसे सर्व पापोंसे छूटते हैं ॥ ५२ ॥ तिसीसे सर्व प्रयत्नसे वृषयज्ञ करना. हे गरुड ! वृषोत्सर्गके जैसा पुण्य त्रिलोकीमें नहीं है ॥ ५३ ॥

पति व पुत्रके जीवते जो स्त्री मरजाय तो वृषोत्सर्ग नहीं करना; दूधवाली गौका दान देना ॥ ५४ ॥ वृषको जो कंधा पीठपर वहता है हे गरुड ! वो मनुष्य कल्पपर्यंत घोर नरकोंमें पडताहै ॥ ५५ ॥ जो निर्दयी वृषको मूठि वा लकडीसे मारताहै वो मनुष्य कल्पपर्यंत यमराजकी यातना भोगताहै ॥ ५६ ॥ ऐसे वृषोत्सर्ग करके, सपिंडी करनेके पहले षोडश श्राद्ध करने, सो मैं तुमको कहताहूं ॥ ५७ ॥ मृतकस्थानमें, द्वारमें, अर्द्धमार्गमें, चितामें, शवके हाथमें व अस्थिसंचयसमयमें, ऐसे छे पिंड और दश दिनमें दश पिंड देना

पतिपुत्रवतीनारीद्वयोरग्रेमृतायदि ॥ वृषोत्सर्गंनैवकुर्याद्दद्याद्गांचपयस्विनीम् ॥ ५४ ॥ वृषभंवाहयेद्यस्तुस्कंधेपृष्ठेचखेचर ॥ सपतेन्नरकेघोरेयावदाभूतसंप्लवम् ॥ ५५ ॥ वृषभंताडयेद्यस्तुनिर्दयोमुष्टियष्टिभिः ॥ सनरःकल्पपर्यंतेभुंजतेयमयातनाम् ॥ ५६ ॥ एवंकृत्वा वृषोत्सर्गंकुर्याच्छ्राद्धांनिषोडश ॥ सपिंडीकरणादर्वाक्तदहंकथयामिते ॥ ५७ ॥ स्थानेद्वारेऽर्धमार्गेचचितायांशवहस्तके ॥ अस्थिसंचयनेषष्ठोदशपिंडादशाह्निकाः ॥ ५८ ॥ मलिनंषोडशंचैतत्प्रथमंपरिकीर्तितम् ॥ अन्यचषोडशंमध्येद्वितीयंकथयामिते ॥ ५९ ॥ प्रथमंविष्णवेदद्याद्द्वितीयंश्रीशिवायच ॥ याम्यायपरिवारायतृतीयंपिंडमुत्सृजेत् ॥ ६० ॥ चतुर्थंसोमराजायहव्यवाहायपंचमम् ॥ कव्यवाहायषष्ठंचदद्यात्कालायसप्तमम् ॥ ६१ ॥ रुद्रायचाष्टमंदद्यान्नवमंपुरुषायच ॥ प्रेतायदशमंचैवैकादशंविष्णवेनमः ॥ ६२ ॥

॥ ५८ ॥ यह मलिनषोडशी प्रथम कही है. दूसरी मध्यषोडशी तुमको कहताहूं ॥ ५९ ॥ प्रथम विष्णुको पिंड देना, दूजा शिवको देना, तीजा यमके परिवारको देना ॥ ६० ॥ चौथा सोमराजको देना, पंचम हव्यवाहनाम अग्निको देना, छठा कव्यवाहनामअग्निको देना, सप्तम कालको देना, ॥ ६१ ॥ महादेवको अष्टम पिंड देना; नवमा पुरुषको देना, प्रेतको दशमा देना, ग्यारहवां विष्णुको देना ॥ ६२ ॥

बारहवां ब्रह्माको देना, विष्णुको तेरहवां देना, चौदहवां शिवको देना, यमको पंद्रहवां देना, ॥ ६३ ॥ हे गरुड ! तत्पुरुषको सोलहवां पिंड देना. यह मध्यमषोडशी तत्वज्ञाता पुरुष कहते हैं ॥ ६४॥ बारह महीनोमें बारह मासिक, पाक्षिक, त्रिपाक्षिक, ऊनषाण्मासिक, ऊनाब्दिक यह उत्तम षोडशी मैंने तुमको कही है सो खीर पकाकर, हे गरुड ! ग्यारहवें दिन करनी ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ऐसे तीनों षोडशियोंके अड़तालीश श्राद्ध प्रेतपनाको नाश करते हैं. जिसका यह सब विधि होता है वो पित्रीश्वरोंकी पंक्तिमें प्राप्त होता

द्वादशंब्रह्मणेदद्याद्विष्णवेचत्रयोदशम् ॥ चतुर्दशंशिवायैवयमायद्क्शपंचकम् ॥ ६३ ॥ दद्यात्तत्पुरुषायैवपिंडंषोडशकंखग ॥ मध्यंषो
डशकंप्राहुरेतत्तत्त्वविद्दोजनाः ॥६४ ॥ द्वादशप्रतिमासेषुपाक्षिकंचत्रिपाक्षिकम् ॥ न्यूनषाण्मासिकंपिंडंदद्यान्न्यूनाब्दिकंतथा ॥ ६५ ॥
उत्तमंषोडशंचैतन्मयातेपरिकीर्तितम् ॥ श्रपयित्वाचरुंतार्क्ष्यकुर्यादेकादशेऽहनि ॥ ६६ ॥ चत्वारिंशत्तथैवाष्टौश्राद्धंप्रेतत्वनाशनम् ॥
यस्यजातंविधानेनसभवेत्पितृपंक्तिभाक् ॥ ६७ ॥ पितृपंक्तिप्रवेशार्थंकारयेत्षोडशत्रयम् ॥ एतच्छ्राद्धविहीनश्चेत्प्रेतोभवतिसुस्थि
रम् ॥ ६८ ॥ यावन्नदीयतेश्राद्धंषोडशत्रयसंज्ञकम् ॥ स्वदत्तंपरदत्तंचतावन्नैवोपतिष्ठते ॥ ६९ ॥ तस्मात्पुत्रेणकर्तव्यंविधिनाषोड-
शत्रयम् ॥ भर्तुर्वाकुरुतेपत्नीतस्यश्रेयोह्यनंतकम् ॥ ७० ॥

है ॥ ६७ ॥ सो पितृपंक्तिमें प्रवेश होनेको तीनों षोडशी करनी. ये कहेभयें अड़तालीश श्राद्ध न किये तो वह बहोत कालतक प्रेतपनामें रहता है ॥ ६८ ॥ जहांतक तीनों षोड़शीका श्राद्ध प्राणीको नहीं दियाजाय तहांतक अपना वा दूसरेका दिया उसे नहीं मिलता है ॥ ६९ ॥ तिसीसे पुत्र तीनों षोड़शी करे; अथवा स्त्री अपने पतिका षोडशी श्राद्ध करै तौ उसका अनंत फल होताहै ॥ ७० ॥

मरेहुवे पतिकी जो स्त्री और्ध्वदेहिक क्रिया करतीहै तथा मृततिथिमें, आश्विनमें श्राद्धपक्षमें, श्राद्ध करतीहै उसको मैं सती कहताहूं ॥ ७१ ॥ वह स्त्री तौ पतिके उपकारके वास्ते जीवतीहै, उसका जीवन सफल है, जो मरेहुवे पतिको सेवतीहै ॥ ७२ ॥ अथवा कोई स्त्री जो प्रमादसे अग्निसे वा जलसे मरजाय तौ उसके संस्कार आदि सर्व कर्म यथाविधि करना ॥ ७३ ॥ प्रमादसे वा इच्छासे वा जो कदाचित् सर्पसे मर जाय तो दोनों पक्षमें पंचमीको नाग पूजना ॥ ७४ ॥ आटाकी वा पृथ्वीपर

संपरेतस्ययापत्युःकुरुतेचौर्ध्वदेहिकम् ॥ क्षयाहंपाक्षिकश्राद्धंसासतीत्युच्यतेमया ॥ ७१ ॥ उपकारायसाभर्तुर्जीवत्येषापतिव्रता ॥ जीवितंसफलंतस्यायामृतंस्वामिनंभजेत् ॥ ७२ ॥ अथकश्चित्प्रमादेनम्रियतेवह्निवारिभिः ॥ संस्कारप्रमुखंकर्मसर्वंकुर्याद्यथाविधि ॥ ७३ ॥ प्रमादादिच्छयावापिनागाद्वाम्रियतेयदि ॥ पक्षयोरुभयोर्नागंपंचमीषुप्रपूजयेत् ॥ ७४ ॥ कुर्यात्पिष्टमयींलेख्यांनागभोगाकृतिंभुवि ॥ अर्चयेत्तांसितैःपुष्पैःसुगंधैश्चंदनेनच ॥ ७५ ॥ प्रदद्याद्धूपदीपौचतंडुलांश्चतिलान्क्षिपेत् ॥ आमपिष्टंचनैवेद्यंक्षीरंचविनिवेदयेत् ॥ ७६ ॥ सौवर्णंशक्तितोनागंगांचदद्याद्द्विजन्मने ॥ कृतांजलिस्ततोब्रूयात्प्रीयतांनागराडिति ॥ ७७ ॥ पुनस्तेषांप्रकुर्वीतनारायणबलिक्रियाम् ॥ तयालभंतेस्वर्वासंमुच्यंतेसर्वपातकैः ॥ ७८ ॥

लिखीहुई सर्पके शरीरकी आकृति करना, उसको सपेद सुगंधित पुष्पोंसे व चंदनसे पूजना ॥ ७५ ॥ धूप, दीप, देना. चांवल और तिल डालना. आटाकी नैवेद्य, दूध अर्पण करना ॥ ७६ ॥ ब्राह्मणको शक्तिसे सुवर्णका सर्प और गोदान देना; पीछे हाथ जोड़के बोलना, कि हमारेपर नागराजा प्रसन्न होवै ॥ ७७ ॥ फेर उनकी नारायणबलिकी क्रिया करनी. तिससे स्वर्गमें बास प्राप्त होताहै और सब पापोंसे छूटताहै ॥ ७८ ॥

ऐसे सर्व क्रिया करके, जलसे भरके, अन्नसहित घटदान वर्षपर्यंत नित्य देना वा एक दिवसमें ग्यारहवें दिन तीनसौ साठ पिंड और जलांजलि देनी ॥ ७९ ॥ ग्यारहवें दिवस कर्म करके, पीछे बारहवें दिन सपिंडीकर्म करना और सूतक निवृत्तहुवे पीछे शय्यादान तथा पददान देना ॥ ८० ॥ इति ज्ञानबोधिनीभाषाटीकायां एकादशादिनविधिनिरूपणो नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ ॥ गरुडजी पूछते हैं-हे प्रभो ! सपिंडनकी विधि कहो और सूतकका निर्णय कहो. शय्यादान पददानकी सामग्री कहो और उनका फल मेरे प्रति कहो ॥ १ ॥ तब भगवान् कहतेहैं-हे गरुड ! सुनो. सपिंडीआदि अखिल क्रिया कहताहूं जिस सपिंडी क्रियासे प्राणी प्रेतनामको त्यागके,

एवंसर्वक्रियांकृत्वाघटंसान्नंजलान्वितम् ॥ दद्यादब्दंयथासंख्यान्पिंडान्वासजलान्क्रमात् ॥ ७९ ॥ एवमेकादशेकृत्वाकुर्यात्सापिंडनंततः ॥ शय्यापदानांदानंचकारयेत्सूतकेगते ॥८०॥ इतिश्रीगरुडपुराणेसारोद्धारेएकादशदिनविधिनिरूपणंनामद्वादशोऽध्यायः ॥ ॥ १२ ॥ ॥ गरुडउवाच ॥ ॥ सपिंडनविधिंब्रूहिसूतकस्यचनिर्णयम् ॥ शय्यापदानांसामग्रींतेषांचमहिमाप्रभो ॥ १ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ शृणुतार्क्ष्यप्रवक्ष्यामिसापिंड्याद्यखिलांक्रियाम् ॥ प्रेतनामपरित्यज्ययंयापितृगणेविशेत् ॥ २ ॥ नपिंडोमिलितोयेषांपितामहशिवादिषु ॥ नोपतिष्ठंतिदानानिपुत्रैर्दत्तान्यनेकधा ॥ ३ ॥ अशुद्धःस्यात्सदापुत्रोनशुद्ध्यतिकदाचन ॥ सूतकंननिवर्तेतसपिंडीकरणंविना ॥ ४ ॥ तस्मात्पुत्रेणकर्तव्यंसूतकांतेसपिंडनम् ॥ सूतकांतेप्रवक्ष्यामिसर्वेषांचयथोचितम् ॥ ५ ॥

पितृगणमें जाताहै ॥ २ ॥ जिन्होंका पिंड पिता पितामह शिवादिकोंमें नहीं मिला है उन्होंको पुत्रोंसे दियाहुवा जो अनेक प्रकारका दान है सो नहीं मिलताहै ॥ ३ ॥ सपिंडी किये विना पुत्र सदा अशुद्ध रहताहै कभी शुद्ध नहीं होता है. सूतकभी निवृत्त नहीं होताहै ॥ ४ ॥ तिसीसे पुत्रने सूतकके अंतमें सबका यथायोग्य सपिंडन करना चाहिये सो वह मैं तुझसे कहताहूं ॥ ५ ॥

ब्राह्मण दश दिन रात्रिसे शुद्ध होताहै; क्षत्रिय बारह रात्रिंसे शुद्ध होता है; वैश्य पन्द्रह रात्रि दिनसे, और शूद्र एकमाससे शुद्ध होताहै ॥ ६ ॥ प्रेतसूतकमें दशदिनसे सपिंड अर्थात् चार पीढ़ीतकके शुद्ध होते हैं; तीन रात्रिसे संकुल्य अर्थात् सातपीढ़ीतकके शुद्ध होतेहैं; गोत्रज अर्थात् दशवीं पीढ़ीतकके स्नानमात्रसे शुद्ध होतेहैं ॥ ७ ॥ चौथे पुरुषतक यानी सपिंड दशरात्रिसे शुद्ध होताहै; पंचम पुरुष छह रात्रिसे, छट्ठा चार दिवससे, सातवां तीन दिनसे ॥ ८ ॥ अष्टम एक दिनसे, नवमां दोपहरमें, और दशवां स्नानमात्रसे शुद्ध होताहै. इसप्रकार मृतक- और जन्मसूतक रहता है ॥ ९ ॥ देशांतरमें गया हुआ पुरुष जिस दिन सुन उसीदिन जितने दश दिनमेंसे बाकी

ब्राह्मणस्तुदशाहेनक्षत्रियोद्वादशेऽहनि ॥ वैश्यःपंचदशाहेनशूद्रोमासेनशुद्ध्यति॥६॥दशाहेनसपिंडास्तुशुद्ध्यंतिप्रेतसूतके॥त्रिरात्रेण
सकुल्यास्तुस्नात्वाशुद्ध्यंतिगोत्रजाः ॥७॥ चतुर्थेदशरात्रंस्यात्षण्णिशाःपुंसिपंचमे ॥ षष्ठेचतुरहःप्रोक्तंसप्तमेचदिनत्रयम् ॥ ८ ॥ अष्ट
मेदिनमेकंतुनवमेप्रहरद्वयम् ॥ दशमेस्नानमात्रंहिमृतकंजन्मसूतकम् ॥ ९ ॥ देशांतरगतःकश्चिच्छृणुयाद्योह्यहर्निशम् ॥ यच्छेषंदश
रात्रस्यतावदेवाशुचिर्भवेत् ॥ १० ॥ अतिक्रांतेदशाहेतुत्रिरात्रमशुचिर्भवेत् ॥ संवत्सरेव्यतीतेतुस्नानमात्राद्विशुद्ध्यति ॥ ११ ॥ आद्य
भागद्वयंयावन्मृतकस्यचसूतके ॥ द्वितीयेपतितेचाद्यात्सूतकाच्छुद्धिरिष्यते ॥ १२ ॥ आदंतजननात्सद्यआचौलान्नैशिकीस्मृता ॥
त्रिरात्रमाव्रतादेशाद्दशरात्रमतःपरम् ॥ १३ ॥ आजन्मनस्तुचौलांतंयत्रकन्याविपद्यते ॥ सद्यःशौचंभवेत्तत्रसर्ववर्णेषुनित्यशः ॥१४॥

रहैं उतने दिन अशुद्ध रहताहै ॥१०॥ जो दश दिन बीते बाद सुनै तौ तीन रात्रि अशुद्ध रहताहै. एक वर्ष व्यतीत हुवे पीछे सुनै तो स्नानमात्रसे शुद्ध होता है ॥ ११ ॥ जो मृतकसूतकके आदिके दो भाग रहैं तबतक यानी छह दिनके मध्यमें दूसरा सूतक हो जाय तौ आदिके सूतकसे दूसरा सूतक शुद्ध होताहै ॥ १२ ॥ दांत आनेके पहिले बालक मरे तो स्नानमात्रसे शुद्धि है; दांत आनेके पीछे चौलकर्मतक एक रात्रिसे शुद्धि है; चौलकर्मके पीछे उपवीतसंस्कारके पहले, तीनरात्रिसे शुद्धि है. इसके आगे दशरात्रिसे शुद्धि है ॥ १३ ॥ जन्मसे लेकर, चौलकर्मतक अर्थात् सत्ताईस मासतक जो कन्या मरजाय तौ सर्व वर्णोंमें नित्य स्नानमात्रसे शुद्धि होतीहै ॥ १४ ॥